संपादकीय

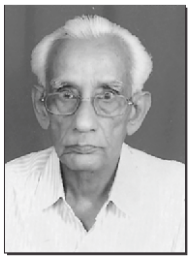

/ke vkj /ke fuji{k \

धर्मग्रन्थों में प्रायः "धर्म" और "सत्य" का समानार्थी शब्दों में प्रयोग मिलता है, जैसे–

धरमु न दूसर सत्य समाना (मानस)

सत्यं वद। धर्मं चर (अर्थात् सत्य बोलो और धर्म पर चलो)

इसका अर्थ यह हुआ कि "सत्य" के बिना धर्म नहीं सधता और धर्म के बिना सत्य। "सत्य" बोलने की चीज है और धर्म चलने की। सत्यानुसार चलना धर्म है।

"धर्म" को यदि परिभाषित किया जाये तो प्रायः ग्यारह अर्थों में इसकी प्रयुक्ति होती है अर्थात्

(1) वह कार्य जिसके करने से करने वाले का इस लोक में अभ्युदय और परलोक में मोक्ष की प्राप्ति हो
(2) आईन, कानून
(3) कर्तव्य
(4) न्याय
(5) किसी वस्तु की वह वृत्ति जो उसमें सदा रहे और उससे कभी पृथक न हो
(6) ईश्वर–भक्ति
(7) कर्तव्याकर्तव्य अवधारणा विषयक शास्त्र
(8) यज्ञ
(9) सत्संग
(10) तौर–तरीका और
(11) उपनिषद।

और "सत्य" के पर्यायों के रूप में निम्नलिखित शब्दों को शामिल किया जाता है– यथार्थ, ठीक, वास्तविक, असल, ईमानदार, सच्चा, पुण्यात्मा, पारमार्थिक सत्ता, नेकी, भलाई, पुण्य आदि। यदि तत्वतः विचार किया जाय तो सत्य के इन समानार्थी शब्दों को "धर्म" के अंतर्गत लेने पर भी कोई कठिनाई दिखाई नही देती। इस प्रकार "धर्म" और "सत्य" एक ही सिक्के के दो पहलू प्रतीत होते हैं।

आजकल secular शब्द के लिए प्रचलित "धर्म–निरपेक्ष" शब्द पर भी लगे हाथ विचार कर लेना भी उचित प्रतीत होता है। ऊपर के संदर्भ के साथ यदि हम "धर्म" पर विचार करें तो यह कैसे संभव हो सकता है कि कोई व्यक्ति धर्म से निरपेक्ष हो जाय! धर्म से निरपेक्ष होने का मतलब होगा न्याय, कर्तव्य, सत्संग, कानून आदि (जो धर्म के पर्याय हैं) से भी निरपेक्ष हो जाना। अतः हमें secular का निरपेक्षतावादी नहीं सापेक्षतावादी अर्थ लेना होगा। हमारे विचार से secular के लिए "धर्म–निरपेक्ष" से अधिक उपयुक्त होगा "लोक–सापेक्ष" शब्द क्योंकि secular का अर्थ होता है of or pertaining to worldly Things. इसी अर्थ में संस्कृत में लोक का अर्थ प्राणी और समाज है। लोकोक्ति में यही अर्थ ध्वनित होता है।

,u-,y- [kMyoky

fo'ks"k laikndh;

28 जनवरी 2019 को माननीय उच्चतम न्यायालय की न्यायमूर्ति आर. एफ. नरीमन और विनीत सरन की युगल पीठ ने अभिभावक विनायक शाह और जामियत उलेमा हिन्द की केन्द्रीय विद्यालयों में संस्कृत प्रार्थनाएँ रोकने की याचिका को संविधान पीठ को विचारार्थ हस्तान्तरित करने का आदेश प्रदान किया है। ज्ञातव्य है कि इस याचिका में के वी स्कूलों में की जाने वाली प्रार्थना "असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय" और "सहनौ भवतु सहनौ भुनक्तु" आदि को संविधान की धारा 28 के अनुसार असंवैधानिक घोषित किये जाने का अनुरोध किया गया है। ध्यान देने योग्य है कि केन्द्रीय विद्यालय संगठन द्वारा यह व्यवस्था वर्ष 2012 से प्रभावशील की गई है।

याचिकाकर्ता का कहना है कि चूंकि ये प्रार्थनायें धार्मिक कोटि की हैं, अतः इन्हें विद्यार्थियों पर थोपा नहीं जा सकता। इनसे विद्यार्थियों में विज्ञान और विवेकशीलता के स्थान पर अंधविश्वास पनपता है जो उनके और देश के विकास में कतई सहायक नहीं है।

इस याचिका द्वारा इसमें दिये गये तर्कों और इसके महत्व का आकलन करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय की वर्तमान व्यवस्था ने अनेक ऐसे प्रश्नों को जन्म दिया है जो भारत की सनातन– सार्वभौम ज्ञान–परम्परा के पोषकों को चिन्ता में डाल देते हैं। प्रश्न यह है कि क्या भारत का संविधान भारतीयों से यह अपेक्षा करता है कि भारतीय परम्परा के संपूर्ण ज्ञान और विज्ञान को किसी गहरे गड्ढे में दफन कर देना ही देश की संवैधानिकता है जबकि सारे विश्व में भारतीय ऋषियों और शोधशास्त्रियों के सिद्धान्तों और स्थापनाओं की आज लगातार पुष्टि हो रही हो ?क्या आज संस्कृत को कम्प्यूटर, अंतरिक्ष यात्रा और गणितीय विश्लेषण की सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषा नहीं मान लिया गया है तथा योरुप और अमेरिका में इसकी शिक्षा का व्यापक विस्तार नहीं हो रहा है ?

मामले की सुनवाई के समय भारत सरकार के अभिभाषक तुषार मेहता ने उचित ही कहा कि माननीय उच्चतम न्यायालय जिस भारतीय उद्घोष "सत्यमेव जयते" के नीचे काम करता है, क्या वह उसे असंवैधानिक घोषित करना चाहेगा ?आगे हम यह भी कहना चाहेंगे कि कया हम देश की रक्षा में

तैनात पृथिवी, अग्नि, तेजस और ब्रह्मोस का नाम बदलकर उन्हें कोई नई गुणवत्ता प्रदान करना चाहते हैं ?

इस संबंध में यह तर्क दिया गया है कि चूंकि केन्द्रीय विद्यालय सरकारी सहायता पर चलते हैं अतः उन्हें इस दकियानूसी सोच से मुक्त करना होगा ?अच्छा हो, याचिकाकर्ता इसकी एक पूरी सूची बना लें। खासकर उन देशद्रोहियों और अलगाववादियों की भी जो जिसकी सुरक्षा के घेरे में रहते और चलते हैं, उसकी जड़ों को कमजोर करने में भी लगे रहते हैं।

ऐसा सुना गया है कि भारत सरकार की ओर से प्रथमतः इस मामले में कहा गया है कि चूंकि केन्द्रीय विद्यालय संगठन एक स्वायत्त इकाई है अतः इसका प्रतिरक्षण कार्य उसी का है। वास्तव में जहां यह राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ा बहुत गंभीर प्रश्न है, वहीं सच्चे ज्ञान और मानवीय मूल्य के प्रतिरक्षण की आवश्यकता भी है। आखिर बृहदारण्यक उपनिषद् के इस उद्घोष कि हम असत से सत्, अंधकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरता की राह चलें में किसका अपमान या तिरस्कार दिखाई दे सकता है जब तक कि कि झूठ, अंधकार और मृत्यु को ही परम सत्य मानकर कोई न चलना चाहता हो ?आज जब विज्ञान ने यह सिद्ध किया है कि देवनागरी के उच्चारण से शरीर के स्नायु मंडल में ऊर्जा का संचार होता है और संस्कृत के पाठ मात्र से ध्यान, प्रार्थना और एकाग्रता की प्राप्ति होती है, तो क्या दकियानूसी वह तथाकथित धर्मनिरपेक्षता ही नहीं है जो एक पाँव पर अटके उस धर्म वृषभ को हमारे सामने ला खड़ा कर देती है जिसे भागवत में कलियुग द्वारा डंडा मारकर चलने को विवश भी किया जाता है।

iHkn;ky feJk

rylhekul ifr"Bku

ic/kdkfj.kh lfefr dpuko

शनिवार दिनांक 22 जून से गुरुवार दिनांक 28 जून 2019 तक प्रबंधकारिणी समिति के चुनाव किये जा रहे हैं। प्रबंधकारिणी समिति ने सर्वसम्मति से श्री ब्रतकिशोर सांघी, सीनियर एडवोकेट को चुनाव अधिकारी तथा श्री महेश रजक को सहायक चुनाव अधिकारी मनोनीत किया है।

चुनाव का विस्तृत कार्यक्रम मुख पत्रिका तुलसी मानस भारती के माह जून के अंक में प्रकाशित किया जाएगा।

सचिव

ys[k

jkedFkk dk foLrkj

olUr fujx.k

रामकथा का लोक में जितना विस्तार हमें दिखाई देता है, उतना किसी ओर चरित का नहीं। विश्व में दो ही महानायक हुए हैं, जिनके चरित्र ने सम्पूर्ण संसार को प्रभावित किया है। उनमें से एक सृष्टि के प्रथम कवि वाल्मीकि के "राम" हैं, और दूसरे महाभारत के सूत्रधार "कृष्ण"। अवतारवाद की दृष्टि से भी देखें तो मनुष्य के रूप में देव के समकक्ष अवतरित पूर्ण पुरुष हैं तो वह "राम" ही बैठते हैं। महाभारतीय कृष्ण–चरित भी उन्हीं का विस्तारित रूप है। इसे ठीक से समझ लेना जरूरी है। ये दो कालों के महाचरितों की महागाथा है, जो आज सारे विश्व में किसी न किसी रूप में गाई जाती है। गूँजती है। यहाँ देखने वाली बात यह है कि लोक में रामकथा खूब फैली और फली, लेकिन आदिवासी लोक में रामकथा के पैर उतने नहीं फैले। इसका कारण क्या है ? यह विचारणीय प्रश्न है। जबकि आदिम समूहों का निवास आर्य संस्कृति यानी रामकथा से बहुत पहले का है। उनमें रामकथा का इतना विस्तार क्यों नहीं हुआ ? मित्रों! इसके पीछे भी बहुत से कारण हैं। जिस पर हम आज किंचित विचार करेंगे।

पहले हम लोक में रामकथा के विस्तार को भलीभाँति देख लें, फिर जनजातियों में रामकथा की स्थिति का जायजा लेंगे।

वाल्मीकि रामायण में जिस तरह से रामकथा का पल्लवन हुआ है, वह भारतीय संस्कृति और मूल्यों का ही दर्पण कहा जा सकता है। बाद के रचनाकारों ने अपने समय के अनुरूप इस गौरव को अक्षुण्ण रखा। राम एक प्रजा–वत्सल शासक व सद्गृहस्थ के रूप में स्वीकृत हुए। यह मानव से महामानव बनने की कथा थी और उससे बढ़कर नर से नारायण बनने की कथा थी। इसीलिए रामकथा जाति, धर्म, देश, काल को लाँघती हुई सारे विश्व में फैलती चली गई। जिसमें सम्पूर्ण मानवता को बचाये रखने के सत्य के वे बीज भी थे, जो हर देश, काल और भूमि में पल्लवित होने की सामर्थ्य रखते थे। यही कारण है कि राम का चरित महालोकत्व ग्रहण करता चला गया। "राम" को लोगों ने भगवान तो माना ही, उसे सृष्टि के रचयिता "ब्रह्म" के समकक्ष बैठा दिया। राम देवत्रयी के खास देवता विष्णु के पूर्ण अवतार माने गये। वामन, परशुराम से भी राम आगे निकल गये। महाभारत काल में कृष्ण

के रूप में पूर्णावतार की एक और कड़ी जुड़ गई। कृष्ण के बाद कल्कि अवतार के रूप में "बुद्ध" को माना गया। यह वह समय था, जब रामकथा वाल्मीकि रामायण से आगे आध्यात्म रामायण की ओर बढ़ रही थी। इसके कारण रामकथा के पात्रों का चरित्र–चित्रण पारलौकिक हो उठा और इसका परिणाम यह हुआ कि रामकथा की मानवीय कमजोरियों को ढँकने की चेष्टा की गई। जिसके लिए अनेक आख्यायन रचे और जोड़े गये। इस तरह रामचरित अलौकिक होता चला गया। इस बात को देखने के लिए हमें उन देश ओर उस देश की भूमि की संस्कृतियों को समझना होगा, जहाँ–जहाँ रामकथा के बीज पहुँचे और वटवृक्ष के रूप में विकसित हुए।

इस कार्य में वाल्मीकि रामाायण के देश काल के अनुरूप अनेक रूपान्तरण तो हुए। इसमें "आध्यात्म रामायण" ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

थाई देश का पूर्व नाम "स्याम" रहा है। यहाँ सबसे पहले पाली भाषा में "रामायण" पहुँची। जो रूपान्तरित होकर "राम कित्ती" हो गई। आजकल थाई भाषा में जिसे "रामकीन" कह जाता है। स्याम का लोक मूलतः भारतीय मूल का है, जिसकी स्मृतियों में रामकथा पहले से ही रची बसी रही है। फिर भी पाली की "रामकित्ती" थाई भाषा में "रामकीन" होकर कई स्थानीय संस्कृति के अनुभावन तत्वों को ग्रहण करती हुई नया कलेवर प्राप्त करती है। वहाँ सीता का जन्म प्रसंग बदल गया। यहाँ सीता को "सीदा" कहा गया, जो साम्राज्ञी "मोंतो" की कन्या है। ज्योतिषियों ने उसे सर्वनाशी कन्या बतलाया। सम्राट पिता लोंको ने उसे समुद्र में बहा दिया। वह कन्या मिथिलापति "जोनोक" को जल में बहती मिली। तपस्यारत जोनोक (जनक) ने शिशुकन्या को एक गड्ढे में रख दिया और धरती से उसे पालने की प्रार्थना कीं। जनक की तपस्या समाप्त होने तक सीता युवा हो गई। इसके बाद की कथा "धनुष यज्ञ" की तरह है। जहाँ राम धनुष भंग नहीं करते। बल्कि शिवधनुष को उठाकर प्रतियोगिता जीत लेते हैं। जीत में उन्हें "सीदा" मिलती है। इस तरह सीता लोंको (लंका) नरेश की पुत्री बैठती है, जिसका बाद में रावण ने हरण किया था। इसका जिक्र अन्य रामायणों में भी मिलता है। यहाँ सीता ने आत्महत्या करने की कोशिश की थी, तब हनुमान ने उन्हें इस जघन्य कार्य से रोका था। बाद में राम ने सुग्रीव हनुमान आदि की सहायता से लंका विजय की थी।

कम्बोड़िया में रामकथा वाल्मीकि रामायण से पहुँची। जिसे "रामकेर" रामायण कहा जाता है। यहाँ रामायण "सामेर संस्कृति" में पूरी तरह से रंग जाती है। यहाँ लोक और शास्त्र की रामायण पृथक–पृथक हैं।

श्रीलंका में अज्ञात कवि द्वारा रची गई 12वीं शताब्दी की "जानकी हरण" के रूप में रामायण मौजूद है। यहाँ विभीषण की प्रतिष्ठा है, जिसने रावण के वध के बाद लंका में राम के सहारे सुशासन किया था। बुद्ध लोग भी विभीषण को मान देते हैं।

चीन में रामायण का नायक भरत को माना है। यद्यपि चीन बुद्ध धर्म को मानता है, फिर भी वाल्मीकि रामायण के कई संस्करण मिलते हैं। यहाँ राजा शुद्धोधन को बुद्धावतार में दशरथ बताया गया है। "राहुल की माँ महामाया को सीता तथा शिष्य आनन्द को भरत निरूपित किया है।" बुद्ध ने स्वयं अपने मुख से शिष्यों को यह कथा सुनाई थी। यह कथा "दशरथ जातक" के नाम से पाली भाषा में मिलती है। भरत ने महानायक की तरह सिंहासन पर राम की चरण पादुकाएँ रखकर सुचारु

राजकाज चलाया था। वन से लौटने के बाद राम तो भरत को ही राजसिंहासन सौपना चाहते थे।

बर्मा में बौद्ध धर्म होने के बाद भी रामकथा लोकप्रिय हुई। यहाँ तक कि बुद्ध को राम का अवतार बताया गया है। यहाँ विष्णु के दशावतारों की मूर्तियाँ मिलती हैं। यहाँ की रामकथा में बहुत सी किंवदन्तियाँ जुड़ गई हैं– जैसे लक्ष्मण के लिए हनुमान संजीवनी वर्मा के पोपा पहाड़ से ही लाये थे। वहाँ "रामलीला" का चलन है। यहाँ के कवि उतो ने तुलसी रामायण से प्रेरणा ले "रामगमन" रामायण की रचना की है।

लाओस को लवदेश कहते हैं। जिसे "स्वर्णभूमि" कहा जाता था। पहली शताब्दी के पूर्व ही यहाँ एक हिन्दुस्तानी ने अपना राज्य कायम किया था। यहाँ खमेर जाति के लोग रहते हैं, जो भारतीय मूल के वंशज हैं। यहाँ कांग नदी को गंगा माना जाता है। लाओस में रामायण कथा नृत्य, गीत और चित्र तथा शिल्पों में मिलती है। यहाँ की रामायण का नाम "फालक फा लाम" है। यहाँ रामलीला भी होती है। यहाँ भी गौतम बुद्ध को राम का अवतार माना जाता है।

हमारे देश में रामकथा के विभिन्न भाषाओं में तीन सौ से अधिक ग्रन्थ उपलब्ध हैं। बनारस के डॉ. भानुशंकर मेहता ने एक हजार से अधिक रामायणों का होना बताया है। अनुवाद तो और भी अधिक हो सकते हैं। चित्रकूट शोध संस्थान में अनेक रामायण ग्रन्थ संकलित हैं।

पश्चिम बंगाल में कृतिवास रामायण "रंगचीया" प्रचलित है जो वाल्मीकि रामायण पर आधारित है। इसमें समय के प्रभाव के कारण राक्षसी वृत्तियों का वर्णन अधिक किया गया है। सीता–विवाह पर स्त्रियाँ बंगाल में प्रचलित शुभ शंख ध्वनि करती हैं, जिसमें भक्ति भाव की प्रचुरता है।

उड़िया रामायण में कृतिवास रामायण की छाया अधिक है। यहाँ बलरामदास ने बहुत पहले रामायण रची। इसमें शिव और शक्ति का वर्णन किया गया है। उड़िया रामायण में कैकेयी की कलंक मुक्ति के लिए प्रार्थना की गई है।

नेपाल में श्रेष्ठ कवि भानुभक्त की रची रामायण प्रचलित है। जिसका आधार आध्यात्म रामायण है। इसमें सात काण्ड है।

असमिया रामायण वाल्मीकि रामायण का असमिया भाषा रूपान्तरण है। इसके कवि माधव कन्दली हैं जिन्होंने इसे वराहमिहिर राजा महा माणिक्य के आग्रह पर रचा था। इसमें भी सात काण्ड हैं। असमिया रामकथा की पुनर्रचना में सन्त शंकर देव और उनके शिष्य माधवदेव की प्रमुख भूमिका है।

भूटान देश में लिंग गेसर गेलपो नाम से रामायण का मंचन होता है। लिंग गेसर गेलपो का मतलब लिंग का राजा है, जिसे राम की तरह दिखाया जाता है। उसकी पत्नी "सेंगचांग डुकमो" यानी सीता माँ माना गया है। उसी तरह "हारगर काल्प गेलपो" को रावण दिखाया गया है। जो सेंगचांग डुकमो को हरण कर लेता है। उसे छुड़ाने के लिए गेसर गेलपो उससे युद्ध करता है। इसकी भाषा भूटान की राष्ट्रीय भाषा "डीजोग्खा" है। भूटान मूलतः बुद्धिस्ट देश है। इस रामलीला में बुद्धिस्ट वाद्यों और नाटकीय शैली का पारम्परिक प्रयोग देखा जा सकता है। इसकी वेशभूषा बेहद रंग–बिरंगी और कल्पनाशील होती है। युद्ध के दृश्य मार्शल आर्ट पर आधारित होते हैं।

ys[k

/ke.kghuk% i'kfHk% lekuk%

rkjkpn vkgtk

"धर्म" शब्द संस्कृत के कृदन्त प्रकरण में "धृ" धातु के साथ मन् कृदन्त प्रत्यय लगा कर बनता है। "धारणाद् धर्म इति आहुः" अर्थात जिसे धारण किया जाता है उसे धर्म कहते हैं। धारण करने योग्य क्या है, यह प्रश्न अति महत्वपूर्ण है। शास्त्रों का कथन है कि वही तत्व धारण करने योग्य है जिससे जीव के कल्याण का पथ प्रशस्त होता है। वस्तुतः जो शुभ है, पावन है, सत्य है, सनातन है वही धारण करने योग्य है। जो हमें मानवता का पाठ सिखाता है, वही वास्तविक धर्म है। इसलिए जिस आचरण का पालन करने से जीवन में उन्नति होती है तथा आध्यात्मिक जगत को जानकर परम कल्याणकारी सुख की उपलब्धि होती है, उसी को धर्म की संज्ञा दी गई है। जब मनुष्य धर्म के मार्ग पर अग्रसर होता है, तब ही वह जीवन में सुख, समृद्धि एवं शान्ति प्राप्त कर सकता है।

मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताते हुए कहा गया है कि जिस व्यक्ति में धैर्य, क्षमा, मन का संयम, अस्तेय, पवित्रता, इन्द्रियों का निग्रह, शुभकर्मों में शुभबुद्धि, मन–वाणी तथा कर्म में एकता, उत्तम विद्या, अक्रोध इत्यादि गुणों का समावेश हो जाता है अर्थात् जो मनुष्य धर्म को जान लेता है, उस मनुष्य में ये लक्षण स्वतः ही प्रकट हो जाते हैं। धर्म के मार्ग में आरूढ़ व्यक्ति स्वमेव ही इन लक्षणों को धारण कर लेता है। मनुष्य का शरीर एक पवित्र मन्दिर है जिसमें परमेश्वर अपनी सम्पूर्णता के साथ पूर्णरूपेण प्रतिष्ठित है। अतः शास्त्रों में कहा गया है– ***"शरीरमाद्यं खलुधर्म साधनम्"*** अर्थात् मानव शरीर धर्म को साधने का माध्यम है।

वस्तुतः समस्त जगत एवं व्यक्तिगत सुख–शान्ति, भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रगति तथा समृद्धि का एकमात्र आधार धर्म ही है। मानव में यही तत्व सदैव समाविष्ट रहे, इसके लिए धर्म का अवलम्बन आवश्यक है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि धार्मिकता का अवलम्बन कभी घाटे का सौदा नहीं रहा है और न ही रह सकता है। मानव जाति की प्रगति धर्म के कारण ही सम्भव हो सकती है। जब–जब मानव अपने धर्म से च्युत हुआ, धर्म की अवमानना करते हुए अधर्म के मार्ग पर अग्रसर हुआ, तब–तब ही मानवजाति का विनाश हुआ है। विजय वही है, जहां धर्म है। शास्त्रों में कहा भी गया है– ***"यतो धर्मस्ततो जयः।"*** कौरवों की ग्यारह अक्षोहणी सेना के बावजूद महाभारत के महासमर में पांडवों की विजय हुई क्योंकि धर्मबल उनके पास था। मनुष्य जीवन की स्थिरता और शान्ति धर्म पर ही टिकी हुई

है। इतिहास साक्षी है कि जब–जब धर्म की हानि हुई है, तब–तब मनुष्य का अस्तित्व खतरे में पड़ा है। हर समय मानवीय एकता एवं अखंडता के लिए मुख्य जरूरत है धर्म की। महाभारत के शान्तिपर्व में भी कहा गया है–

आहारनिद्रा भय मैथुनं च सामायमेतत्पशुभिर्नणाम्।
धर्मो हि तेषमधिको विशेषोधर्मणहीनाः पशुभिः समानाः।।
(294/29)

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन मनुष्य और पशुओं के लिए समानरूप से स्वाभाविक वृत्ति है। मनुष्य और पशु में यदि कुछ अंतर है तो वह है धर्मतत्व का। जिस मनुष्य के व्यक्तित्व में धर्मतत्व का अभाव है, वह वस्तुतः पशु के ही समान है। महाभारत में स्पष्ट किया गया है कि जहाँ तक बाह्य दृष्टि से देखा जाए तो मनुष्य और पशु के कर्म एक समान ही परिलक्षित होते हैं परंतु धर्म के कारण ही मनुष्य को महानता प्रदान की गई है। पशुओं में धर्म नहीं होता है और जिस मनुष्य में धर्म की किरण नहीं प्रकट होती, वह मनुष्य होते हुए भी पशु जैसा ही है। अतः मानवजीवन में धर्म का अतिशय महत्वपूर्ण स्थान है। वास्तव में यही धर्मतत्व ही उसे एक पशु से अलग पहचान देता है। यदि यह कहा जाए कि धर्म ही सृष्टि का सर्वाधार है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि धर्म के बिना सृष्टि का संचालन संभव ही नहीं है। तनिक विचार करें कि यदि सूर्य, पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु आदि तत्व अपने–अपने प्राकृतिक धर्म का पालन करना छोड़ दें तो सृष्टि की क्या दशा होगी। अग्नि का स्वभाव है दाहकता और जल का स्वभाव है आर्द्रता और शीतलता। यदि ये दोनों अपने–अपने स्वभाव से विमुख हो जाएं तो जगत का कार्य कैसे संचालित होगा। इसी प्रकार मनुष्य यदि अपने धर्म से च्युत हो जाए तो सृष्टि में अस्तित्व का संकट ही खड़ा हो जाएगा। जैसे माता का धर्म है शिशु का पालन–पोषण करना। यदि वह इस धर्म का पालन नहीं करे तो शिशु का जीवन खतरे में पड़ जाएगा। धर्म परिस्थितिजन्य होता है। कब कौनसा कार्य धर्म सम्मत है, यह परिस्थिति विशेष पर निर्भर करता है। जैसे एक सामान्य स्थिति में किसी की हत्या करना अधार्मिक कृत्य है लेकिन युद्ध में शत्रु को मारना धर्म की कोटि में आता है। इसी प्रकार परस्त्री को स्पर्श करना पुरुष के लिए अधर्म है परंतु नदी में डूबती स्त्री को बचाने के लिए उसे पकड़कर बाहर निकालना धर्म का ही निर्वहन कहा जाएगा।

श्रीरामचरितमानस में कहा गया है कि संसार में सत्य के समान अन्य कोई धर्म नहीं है। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं– "धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना।" सभी धर्मग्रन्थ एवं शास्त्र यही कहते हैं कि सत्य को धारण करो। असत्य पर आधारित संसार अधिक समय तक नहीं टिक सकता। इसलिए जब–जब भी धर्म की चूलें हिलने लगती हैं, तब–तब सृष्टि का नियामक परमात्मा भी चिंतित हो जाता है और अपना जन–बल लेकर धर्म की रक्षा के लिए पृथ्वी पर अवतरित हो जाता है। श्रीरामचरितमानस में गोस्वामीजी कहते हैं–

जब जब होई धर्म कै हानी।
बाढहिं असुर अधम अभिमानी।।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी।
सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।
(रा.च.म.1/121/3–4)

अर्थात् जब–जब धर्म की हानि होती है और नीच–अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं और वे ऐसा अन्याय करते हैं जिसका शब्दों में वर्णन नहीं हो सकता। ब्राह्मण, गऊ, देवता इत्यादि कष्ट पाते हैं, तब–तब वे कृपानिधान प्रभु भाँति–भाँति के दिव्य शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा को हरते हैं। गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण कुछ इसी प्रकार का मंतव्य प्रकट करते हुए कहते हैं–

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युथानामधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां बिनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंसथापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे।।
(4 / 7 – 8)

अर्थात् जब–जब भी धर्म की हानि होती है और अधर्म की अभिवृद्धि होने लगती है, तब–तब मैं स्वयं का सृजन करता हूँ अर्थात् अवतरित होता हूँ। साधु–सज्जन पुरुषों की रक्षा के लिए, दुष्टों के विनाश के लिए और धर्म की स्थापना के लिए मैं युग–युग में अवतार लेता हूँ। अब प्रश्न यह उठता है कि अवतार कौन लेता है। गोस्वामीजी श्रीरामचरितमानस में इस प्रश्न का सही और सटीक उत्तर देते हुए लिखते हैं–

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस ते नाना।।
ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई,
भगत हेतु लीलातनु गहई।।
(रा.च.म. 1 / 44 / 3–4)

अर्थात् ऐसे प्रभु जिसके अंश से ब्रह्मा, विष्णु और महेश की उत्पत्ति होती है, जो प्रभु अपने सेवक के वश में होकर भक्त के कल्याण हेतु लीलायोग्य तन धारण करके नाना प्रकार की लीलाएं करते हैं, जो सज्जनों के कल्याणार्थ मानवरूप में अवतरित होते हैं। ऐसे धर्म की स्थापना के लिए श्री गुरु गोविन्दसिंह जी दसम् ग्रन्थ में कहते हैं–

हम इह काज जगत को आए।
धर्म हेत गुरुदेव पठाए।।
जहां तहां धर्म बिथारो।
दुष्ट देशीअन पकरि पछारो।।
यही काज धरा हम जन्मं।
समझ लेहु साधु सम मनमं।।
धर्म चलावन संत उबारन।
दुष्ट सभन को मूल उपारन।।

इतिहास साक्षी है कि गुरुजनों ने समय–समय पर हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए अपने जीवन का बलिदान तक कर दिया। जहां गुरु तेगबहादुरसिंह जी ने दिल्ली के चांदनी चौक में अपना शीश कटाया, वहीं दसवें गुरु गोविन्दसिंह जी ने अत्याचारी शासक औरंगजेब से दो–दो हाथ कर अपने चार मासूम बच्चों की बलि दे दी। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि परहित सबसे बड़ा धर्म है और परपीड़ा सबसे बड़ा अधर्म है–

परहित सरिस धर्म नहीं भाई।
परपीड़ा सम नहीं अधमाई।।

धर्म से भी ऊपर एक धर्म और है जिसे परमधर्म के नाम से जाना जाता है। जो व्यक्ति परमधर्म को धारण करता है उसे सबसे अधिक ज्ञानी और महान कहा जाता है। धर्म का वास्तविक संबंध भी उसी धारणा से है जिसके द्वारा चराचर जगत के स्वामी और नियंता परमात्मा को जाना जाता है। स्वामी विवेकानंदजी कहते हैं– ***"परमात्मा का साक्षात्कार कर लेना, अनुभव कर लेना ही वास्तविक धर्म है। धर्म वह वस्तु है जिससे पशु मनुष्य तक और मनुष्य परमात्मा तक ऊँचा उठ सकता है।"*** ऋग्वेद कहता हे कि धर्म अलौकिक शक्ति का द्योतक है। धर्म की सुरभि जन–जीवन में करुणा, संवेदनशीलता, सद्भाव, श्रद्धा, समन्वय एवं सहयोग की भावना का संचार करती है। धर्म से हमारा जीवन संगीतमय बनता है और शिवमय भी। मनुष्य का वास्तविक धर्म परमात्मा को जानना है। गीता में भगवान ने शरणागति को सबसे बड़ा धर्म बताते हुए अर्जुन से कहा है–

सर्वधर्मान्परितज्य मामेकं शरणं ब्रज।
अहंत्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः
(18 / 66)

अर्थात् सम्पूर्ण धर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल मुझ सर्वशक्तिमान, सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा, तू शोक मत कर।

4 / 114, एस.एफ.एस., अग्रवाल फार्म मानसरोवर, जयपुर–302020

ys[k

dRr0;&ck/k

j?kukFk izlkn lkjQ

1857 का स्वतंत्रता संग्राम। इसके सूत्रधार नानासाहब पेशवा की गिरफ्तारी पर अंग्रेज सरकार ने 50 हजार रुपये का पुरस्कार घोषित किया हुआ था। लुका–छुपी की अनवरत यात्रा और भूख–प्यास से जूझते नानासाहब ने उस दिन एक परिचिता देशभक्त बहन के दरवाजे पर दस्तक दी थी। दरवाजा खोलते ही गृहिणी ने पहचान लिया, कहा– "नानासाहब"। महिला के मुख से शब्द निकला ही था कि उन्होंने मौन रहने का संकेत किया। तब गृहिणी ने बड़े आदर से नानासाहब को घर के अन्दर ले जाकर भोजन कराया।

सहसा द्वार पर उसे अपने पति के आने की आहट सुनाई दी। उसके पति पुलिस में इंस्पेक्टर थे। इससे पहले कि वह कुछ कहती, इंस्पेक्टर महोदय बोले– "आज इस क्षेत्र में नानासाहब के प्रवेश की सूचना मिली है। जानती हो, नानाजी की गिरफ्तारी पर सरकार ने पचास हजार रुपये का पुरस्कार रखा है। हमें यह पुरस्कार मिल जाए तो जिन्दगी आराम से गुजरेगी।"

गृहिणी विचलित हो उठी, "नानासाहब महान् देशभक्त हैं, उन्हें पकड़वाना देशद्रोह होगा। ऐसा कलंकित धन–वैभव, हमें नहीं चाहिए जो एक देशभक्त को पकड़कर मिले।" पति ने अनेक तर्क दिए। नाना भी सब सुन रहे थे। सहसा वे बाहर निकल आकर बोले, "ठीक है मुझे अंग्रेजों को सौंप दो। यदि उस धन से एक बहन की समस्या हल हो सके तो मुझे खुशी ही होगी।"

अपने घर में छिपे नानासाहब को देखकर पुलिस इंस्पेक्टर हर्ष से विभोर हो उठा। उसके हाथ में पिस्तौल नाच उठी। गरजा.. "हाथ ऊपर।"

गृहिणी भी गरज उठी... "खबरदार, जो नानासाहब पर गोली चलाई। वे महान देशभक्त हैं और हमारे अतिथि भी।"

इंस्पेक्टर चीखा.. "हट जाओ" और उसने एक धक्के से अपनी पत्नी को हटाना चाहा। झटके के कारण पिस्तौल नीचे गिर पड़ी और वह गृहिणी के हाथ में आ चुकी थी। अब, इससे पहले कि इंस्पेक्टर नानाजी को गिरफ्तार करता, उस वीरांगना ने पिस्तौल अपने सीने में दाग ली। गोली शरीर के पार हो गई।

अंतिम शब्दों में बोली... "ले लो, तुम्हें पचास हजार का ईनाम चाहिये न, मैं लेकिन, उसमें भागीदार नहीं होऊंगी।" नानासाहब ने दौड़कर उसे उठाते हुए कहा.... "यह तुमने क्या किया बहन ?" और, उसके रक्त का तिलक अपने ललाट पर लगाकर गंभीर स्वर में बोले... "तुम अपने कर्तव्य का पालन करो, इंस्पेक्टर।"

इंस्पेक्टर ने नत मस्तक होकर कहा.... "मुझे कर्तव्य–बोध हो चुका है, नाना साहब! मेरा सारा जीवन, अब देश को समर्पित है। आप जल्दी कीजिए, यहां से भागिए.... कर्मक्षेत्र आपकी बाट जोह रहा है।"

रामनाम मार्ग, सी–3, श्रीराम सोसायटी, सेक्टर 19सी/355, कोपरखैरणे नवी मुंबई (महाराष्ट्र)

dfork

jkepfjr&ekul

ik- lh-ch- JkhokLro ^fonX/k*

रामचरित मानस कथा आकर्षक वृत्रान्त
जिसके पावन पाठ से मन होता है शांत।

शब्द भाव अभिव्यक्ति पै रख पूरा अधिकार
तुलसी ने जिसमें भरा है जीवन का सार।

श्रव्यचरित श्रीराम का मर्यादित व्यवहार
पढे औ' समझे मनुज तो हो सुखमय संसार।

कहीं न ऐसा कोई भी जिसे नहीं प्रिय राम
निशाचरों ने भी उन्हें मन में किया प्रणाम।

दिया राम ने विश्व को वह जीवन आदर्श
करके जिसका अनुकरण मन पाता अति हर्ष।

देता निश्छल नेह ही हर मन को मुस्कान
धरती पै प्रचलित यही शाश्वत सहज विधान।

लोभ द्वेष छल नीचता काम क्रोध तकरार
शत्रु हैं वे जिनसे मिटे जग में कई परिवार।

सदाचार संजीवनी है समाज का प्रान
सत्य त्याग तप प्रेम से मिलते हैं भगवान।

भक्ति सदा भगवान की देती है आनंद
निर्मल मन हो तो बसें सदा सच्चिदानंद।

ए–1, एम.पी.ई.बी. कॉलोनी, शिलाकुंज, नयागाँव, जबलपुर पिन–482008

ys[k

ekul edoV ilx

Mk- ie Hkkjrh

मानस पर प्रवचन करते वाले अधिकांश कथावाचक केवट– प्रसंग को बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। "कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।"– वाली पंक्ति की भी अनेक प्रकार से व्याख्या करते हुए श्रोताओं को भक्ति–भाव से पूरित कर देते हैं। बरबस ही ऐसे प्रसंग पर यहां चर्चा करना इसलिए आवश्यक है कि आज के समाज में सामाजिक–समरसता को आधार बनाकर हमारे नेता–गण तथा समाज–सुधारक बड़ी–बड़ी बातें करते हैं किन्तु इस प्रकार का प्रयास एक राजनैतिक अथवा सामाजिक नारा बनकर रह जाता है।

तो आइए, इस पर विचार करें कि वाल्मीकि ने जिस प्रसंग को उठाया ही नहीं, उसे तुलसी ने किस प्रकार मानस में रखा कि वह मानस का श्रेष्ठ प्रसंग बन गया। तुलसी के इस प्रसंग में भारतीय संस्कृति की अनेक विशेषताओं की झलक देखने को मिलती है। जैसे–

पात भरी सहरी, सकल सुतवारे बारे
केवट की जाति कछु वेद न पढाइयों।।

अर्थात् केवट की आय न्यून है, बेटों की उम्र छोटी है, केवट जाति का होने से उसके बालक शिक्षा भी प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। अधिकांश पिछड़ी जातियों की यही स्थिति है। तुलसी इस स्थिति में भी केवट प्रसंग के माध्यम से यह संदेश देना चाहते हैं कि केवट के समान गरीब लोग भी अपना स्वाभिमान न छोड़ें। यदि वह स्वाभिमान से जिएगा, तो आज के प्रजातंत्र के प्रहरी भी उसे अधिक महत्व देंगे। राम ने स्वाभिमानी केवट को दीनहीन होने पर भी ऐसा अपनाया कि उसे अपनी समकक्षता प्रदान की और उसका उपकार माना।

प्रसंग का प्रारंभ इस प्रकार होता है– बनवास काल में गंगा पार जाने के लिए विश्व–नियंता श्रीराम एक सामान्य नागरिक मल्लाह से निहोरे करते वर्णित हैं। यह वर्णन ऐसा ही है, जैसे कि आज चुनाव की वैतरणी पार करने के लिए विधानसभा तथा लोकसभा के प्रत्याशी अपने पक्ष में वोट देने के लिए मतदाता से निहोरे करते हैं। यहां महत्व की बात यह है कि जिस प्रकार स्वाभिमानी केवट से निहोरे करने पर भी केवट अपनी नाव तब तक नहीं लाता जब तक कि वह अपनी मनमर्जी की

शर्तें राम से स्वीकार नहीं करवा लेता। मतदाता को भी इस प्रकार स्वाभिमानी बनकर अपनी बात उम्मीदवारों के सामने रखना है किन्तु इसके लिए उसमें कुछ सद्‌गुण अवश्य भी होने चाहिए। उन गुणों पर पहले चर्चा कर लें–

1. केवट अपनी बात कहने में बड़ा चतुर है। मतदाता को भी अपनी बात राज्य–सत्ता के समक्ष चतुराई से रखना होगा। केवट राम के चरणोदक लेने के लिए सौदेबाजी पर उतार आता है। कुशल व्यवसायी बनकर वह स्पष्ट शब्दों में कहता है, "आपको गंगा पार जाना है, तो पाँव धुलवाने ही होंगे।" साथ ही, व्यावहारिक रहते हुए बिना नाव में बैठे गंगा पार करने का सरल उपाय भी बता देता है। वह कहता है–

एहि घाट तें थोरिक दूर अहै,
कटि लौं जलु थाह दिखाई हौं जू।।

केवट की कठिनाई यह है कि परमात्मा उसके द्वार पर आए और उसने चरणामृत लेने का लाभ भी नहीं लिया, तो सारा संसार हँसेगा।

लक्ष्मण को जब लगा कि यदि केवट को यह बता दिया जाए कि ये जगत्–सम्राट हैं तो शायद अपनी भूल समझकर शीघ्र ही क्षमा–याचना करेगा। लेकिन केवट ने लक्ष्मण की क्रोध–मुद्रा को पहचान कर राम से कहा– मुझे आपसे रंचमात्र भी डर नहीं लग रहा है। वह कहता है–

बरु मारिए मोहि, बिना पग धोएँ,
हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू।।

लक्ष्मण यह सुनकर चकित रह गए। क्योंकि ऐसी निर्भयता और हठी व्यवहार किसी और में पहले उन्होंने कभी नहीं देखा था।

पुनः वह दावा करता है कि यह निर्भयता मेरी अज्ञानजन्य नहीं है, वह तो जिस कारण है, वह यह कि–

कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।।

इस मर्म शब्द की व्याख्या प्रवचनकार भाँति–भाँति उपाख्यानों से तर्क देकर अपने व्याख्यान में करते हैं, किन्तु सबका सार तत्व यही है कि उसके अंतःकरण में परमसत्ता के प्रति आकर्षण था, इसको नहीं बताते।

वह कहता है कि गौतम पत्नी अहल्या को आपने जड़ स्वभाव से मुक्त कर चेतन–स्वरूप प्रदान किया किन्तु मुझे ऐसी किसी मुक्ति की आकांक्षा नहीं है। मुझे मुक्ति नहीं चाहिए। मेरी समस्या यह है कि आपके चरणकमलों ने अहल्या को जिस जड़ता से मुक्त किया, वैसे मेरी नौका भी जड़ है, वह कहीं स्त्री न बन जाए। मैं पहले से विवाहित हूँ। दो स्त्रियों का पालन–पोषण कैसे करूँगा ?केवट की विनोद–प्रिय बात को सुनकर श्रीराम, सीता और लक्ष्मण मुस्करा दिए।

अंत में केवट की श्रद्धा तथा चतुराई से भरी इन बातों को सुनकर राम को झुकना पड़ा और कहना पड़ा– तुम वही करो, जिससे तुम्हारी आजीविका सुरक्षित रहे। उसके स्वाभिमान को तुलसी ने इस प्रसंग के द्वारा अपने समय की परिस्थितियों में कमजोर वर्ग की महत्ता को स्थापित करने के दृष्टिकोण से लोक–सत्ता को राज्य–सत्ता के आगे अधिक महत्व देने को प्राथमिकता दी है।

तुलसी ने मानस और कवितावली में इस प्रसंग को इतने रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है कि आज भी राम के भक्त केवट के भाग्य की सराहना करते थकते नहीं। जन–जन के मन में रचा बसा यह प्रसंग अनेक दृष्टियों से इतना महत्वपूर्ण बन गया कि तुलसी के अतिरिक्त अन्य कोई भी रचनाकार बाद में अपनी रचनाओं में ऐसी परिकल्पना कर सकने में समर्थ नहीं हो सका। केवट का भाग्य सराहते हुए तुलसी कहते हैं–

जासु नाम सुमिरत इकबारा।
उतरहिं नर भव सिंधु अपारा।।
सोई कृपालु केवटहिं निहोरा।
जेहि जगु किय तिहु पगहु ते थोरा।।

जिस विष्णु के अवतार वामन ने तीन पाँव में सारी पृथ्वी नाप ली, वे ही विष्णु राम के रूप में आज गंगा पार करने के लिए केवट से निहोरा कर रहे हैं। यह केवट कितना भाग्यशाली है कि स्वयं परमात्मा निहोरा करने उसके पास आए हैं। वामन अवतार में वे राजा बलि से भू–दान माँगते हैं किन्तु यहाँ तो जिससे मांगा जा रहा है, वह स्वयं दीन–हीन है। भक्तों को सबकुछ देने वाले भगवान रामभक्त से याचना कर रहे हैं। यहाँ तुलसी ने भगवान भक्तों के वश में है, यह तथ्य भी बड़े सहज ही उजागर किया है। केवट धन्य हो गया और तुलसी ने इस प्रसंग को राम भक्ति का भावनात्मक रूप देकर केवट को न केवल राम के अनन्य भक्त के रूप में स्थापित किया है अपितु केवट के माध्यम से उन्होंने अपने आराध्य राम को ही परमात्मा का अवतार सिद्ध कर दिया।

तब केवट ने सपरिवार राम के चरणों के अमृत का रसास्वादन किया। अकेले उसने चरण नहीं धोए। अपने परिवार के सदस्यों को भी उसमें शामिल किया। तुलसी के शब्दों में–
प्रभु रुख पाइकै बोलाय बालक घरनिहि,
बंदि के चरण चहुं दिसि बैठि घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गंगा जू को।
धोय धोय पीयत पुनीत बारि फेरि–फेरि।।
fu"dke Hkk & हम जिस भक्ति से परिचित हैं, वह है मंदिर जाना, घंटा बजाना, अगरबत्ती जलाना, मूर्ति की परिक्रमा कर प्रसाद चढ़ाना और चरणामृत ग्रहण करना। बस इससे हमारा काम चल जाता है और मनोकामना पूरी होने पर अधिक हुआ तो मानता के अनुसार भगवान को कुछ अर्पण कर देना। जनम से ही बालक परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए, बड़े होने पर अच्छी नौकरी के लिए, अच्छी पत्नी मिले, अच्छी संतान हो आदि कामनाओं की पूर्ति का यही साधन भक्ति के रूप में मानने लगता है। उसकी मान्यता बन जाती है कि मूर्ति–पूजन के बिना भक्ति अधूरी है। यही भक्ति उसकी सभी इच्छाएँ पूरी कर देती है।

कई व्यापारियों को मैंने देखा कि सुबह अपनी दुकान पर आते ही, वे दुकान पर रखे भगवान के चित्र पर माल्यार्पण करते हैं और धूप–दीप प्रज्जवलित कर अपने धंधे का प्रारंभ करते हैं, किन्तु क्या इस धंधे में ईमानदारी होती है ?वस्तुओं की कीमतें, लाभ, नाप–तौल, पैसे की लेन–देन, उधारी जैसे धंधों के प्रति वे कितने ईमानदार रहते हैं, यह बात हम सभी जानते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि उनकी यह पूजा क्षुद्र का ही अनुभव है। उनकी भक्ति संसार तक ही सीमित है किन्तु चेतना का अनुभव विराट का अनुभव है। जिसने पूरे हाथी को देख लिया है, वह अंधों की भांति उसके अलग–अलग अंगों को हाथी कैसे कह सकता है ?

केवट भी कमाई करता है। उसे भी परिवार पालना होता है। बच्चों को शिक्षा देनी होती है किन्तु वह विराट पुरुष राम को सामने देखकर भी धंधे की बात नहीं करता बल्कि चरणामृत ग्रहण करने का आग्रह करता है। उसकी निष्काम भक्ति का यही एक मात्र प्रतीक है। वह परमात्मा को पाकर भी उससे कुछ नहीं मांगता। यहां तक कि उतराई भी नहीं लेता। इससे अधिक उसकी निष्काम भावना का और क्या परिचय दिया जा सकता है। दूसरे की उपस्थिति में व्यक्ति सहज नहीं रह सकता। उसे नैतिकता, शिष्टाचार आदि का बनावटी मुखौटा तो लगाना ही पड़ता है, जो कुछ प्राप्त होता है, उसी में गुजारा कर लेने की उसकी कामना नहीं होती है। वह उससे अधिक की कामना

करता है। किन्तु केवट राम को सम्मुख पाकर निर्ग्रंथ हो जाता है। उसकी समस्त ग्रंथियाँ खुल जाती हैं। वह समस्त कामनाओं, वासनाओं और इच्छाओं से परे हो जाता है। उसका अंतःकरण संकल्प–विकल्प से शून्य हो जाता है। वह बाहर से अन्य व्यक्तियों के समान ही दिख रहा है किन्तु उसके भीतर बड़ा अंतर आ जाता है। इसकी पुष्टि तब होती है, जब श्रीराम गंगापार उतरते हैं। पार उतरने के बाद वह राम को दंडवत् करता है। साधारण लोक–व्यवहार में दण्डवत मिलते समय ही किया जाता है, अथवा विदा लेते समय भी किन्तु केवट ने राम के गंगा किनारे आते समय उन्हें दण्डवत् नहीं किया, जब उन्हें पार उतारा तब दंडवत किया। यही केवट की निष्काम भक्ति का प्रमाण है। उसके मन में तर्क था कि यदि मैंने आते समय दंडवत कर लिया तो उसका भाव होगा राम के प्रति समर्पण और समर्पण जिसे किया जाता है, उसकी हर आज्ञा का पालन उसे करना होता है। अतः पहले अपने मनोनुकूल इनसे व्यवहार कर लूँ फिर साष्टांग प्रणाम करूँगा। जब वे कोई आदेश देंगे तो उसका पालन भी अवश्य करूँगा। किन्तु बाद में साष्टांग प्रणाम करने पर राम संकोच में पड़ गए। वे सोचने लगे कि इस समर्पण करने वाले भक्त को वे क्या दें ? मुक्ति की भी इसकी इच्छा नहीं, तो केवट क्या चाहता है ? तब सीता ने इस द्वंद्व से राम को निकालते हुए अपनी हाथ की मुद्रिका उतार कर राम को सौंप दी। राम ने उस मुद्रिका को यह कहते हुए केवट को देना चाहा कि, ***"कहेऊ कृपालु लेहु उतराई।"*** यह सुनकर केवट बोला, ***"आज मैं काह न पावा।"***

तुलसी की रचना–शैली की यह अद्‌भुत क्षमता है कि वह किसी दृश्य को दर्शन में बदल देती है। केवट की बात सुनकर राम सोचने लगे कि मैंने तो अभी मुद्रिका देने का प्रस्ताव ही किया है किन्तु यह कहता मैंने क्या नहीं पाया ? तभी पुनः अपनी बात को स्पष्ट करते हुए केवट कहता है, ***"मिटे दोष दुःख दारिद दावा।"*** अर्थात् मेरे जीवन में आज से दोष, दुःख और दरिद्रता दूर हो गई। यह इस प्रसंग की फलश्रुति है। तुलसी कहना चाहते हैं कि परमात्मा के दर्शन होने पर भी यदि भक्त का हृदय कलुषित, दुःखी और भौतिक सुविधाओं की लालसा करता है, तो वह ईश्वर का सच्चा भक्त नहीं है।

तभी केवट के मुँह से वे कहलाते हैं, यदि आपके मन में मुझे देने की भावना है तो–

फिरती बार मोहि जो देवा।
सो प्रसाद मैं सिर धरि लेवा।।

अर्थात् लौटते समय आप जो मुझे देंगे, मैं उसे प्रसाद मानकर सिर पर धारण कर लूँगा। उतराई मानकर नहीं। पाठकों को स्मरण दिलाना चाहूँगा कि यही मुद्रिका फिर राम ने अपनी अँगुली में पहन ली। उस मुद्रिका पर "राम का नाम" अंकित था। इस मुद्रिका से ही हनुमान जी के रामभक्त होने का परिचय लंका में सीता को मिलता है। पाठकों को जिज्ञासा होगी कि फिर राम ने उसकी सेवा के बदले उसे क्या दिया ?तुलसी कहते हैं, तब राम केवट को अपनी निर्मल और अमूल्य भक्ति का वरदान देकर उसका उद्धार करते हैं,

विदा कीन्ह करुणायतन, भगति बिमल बर–देह।

3- doV dk fe ykjkT; lEeku% भगवान राम जब लंका–विजय के पश्चात अयोध्या लौटे तो राज्याभिषेक के समय उन्होंने केवट को आमंत्रित किया। समारोह में भाग लेने के पश्चात राम ने उसे अपने वस्त्र, आभूषण और प्रसाद देते हुए आगे भी उससे आते–जाते रहने का आग्रह किया।

इस प्रकार तुलसी ने इस केवट प्रसंग में सामाजिक–समरसता के अनेक सूत्र छोड़े हैं, जिन पर राजनीतिक तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं को ध्यान देना होगा। यह प्रसंग उन्होंने इतने प्रभावी

ढंग से रखा है कि कुछ लोगों की दृष्टि में यह सारा प्रसंग काल्पनिक सा लगता है किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि साहित्य कल्पना और यथार्थ का संगम है। इतिहास नहीं। साहित्य का मुख्य ध्येय व्यक्ति के अंतःकरण का परिष्कार करना है। समाज का हित करना है। इस दृष्टि से देखें तो तुलसी का केवट प्रसंग मानस की एक अति संवेदनशील रचना है।

अंत में, कहना चाहूंगा कि वे इस प्रसंग पर चिंतन करें, तो जीवन–प्रबंध के अनेक सूत्र हाथ लगते हैं–

1. भक्त को अपनी दीनता की अपेक्षा स्वाभिमान से जीना आना चाहिए।
2. कर्तव्यनिष्ठता में आय, परिवार, जाति या शिक्षा आड़े नहीं आना चाहिए। आज व्यक्ति अन्याय और अनीति से कमाकर अपने परिवार को सुखी रखने का प्रयत्न करता है और उच्च जाति में पैदा होकर तथा उच्च शिक्षा को प्राप्त करके भी भौतिक सम्पन्नता बढ़ाने की ओर लगा रहता है और कर्तव्य के प्रति उदासीन रहता है। यह स्थिति ठीक नहीं।
3. भक्त को अपनी बात को किसी के भी सामने हठपूर्वक रखना आना चाहिए। इसके लिए किसी भी प्रकार का भय या संकोच नहीं करना चाहिए।
4. राज्यसत्ता को लोकसत्ता के अधीन कार्य करना चाहिए। हर नागरिक की बात धैर्यपूर्वक सुनकर उसका समाधान करना चाहिए।
5. भक्त को निष्काम भाव से अपना कर्तव्य पूरा करना चाहिए और उस कर्तव्य के निभाने के एवज में जितना वेतन उपहार अथवा धन मिले उसी में संतोष अनुभव कर अपना जीवन बिताना चाहिए।
6. परमात्मा का स्मरण करने के साथ–साथ यदि भक्त अपने को आंतरिक दोषों से मुक्त नहीं कर सका, दुःखी रहने का अभ्यासी बना रहा अथवा दरिद्रता का आभास करता रहा तो वह भूमिका स्वार्थपरक होती है।
7. बाहरी आचरण भक्ति की कसौटी नहीं बन सकता। भक्ति को व्यापार बनने से रोकें।
8. भक्ति के लिए आजीविका साधन बने, किन्तु आजीविका के लिए भक्ति साधन न बने।
9. ईश्वर के निमित्त किए गए कार्यों का प्रतिफल स्वीकार न करें।
10. भौतिक जीवन की अपेक्षा आध्यात्मिक दृष्टि से जीवन बिताना चाहिए। भारतीय संस्कृति की यही एक विशेषता है। संभव है आज के भौतिक–विकासवादी दृष्टि के लोगों को तुलसी के ये सूत्र ठीक न लगें किन्तु कोई भी कृत्य अंतःकरण की शुद्धि से किया जाए तो समाज सुखी और उन्नतशील होता है। प्रसन्नता का अनुभव करता है। यह सनातन सत्य है।

इन सूत्रों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तुलसी भौतिक समृद्धि के विरोध में नहीं हैं किन्तु अध्यात्म प्रधान जीवन के साथ–साथ भौतिक वस्तुओं का उपभोग करना भी आना चाहिए इस नीति के प्रतिपालक हैं। सामाजिक समरसता का यही बीज मंत्र है। पाठक चाहे तो वे अन्य सूत्र भी खोज सकते हैं। तुलसी ने इस प्रसंग में जीवन–प्रबंधन के ऐसे अनेक सूत्र छोड़े हैं, उस पर चिंतन अवश्य होना चाहिए। प्रवचनकारों को अपनी विषय–वस्तु वर्तमान जीवन से जोड़कर उसकी व्याख्या श्रोताओं के सम्मुख रखना चाहिए, यही निवेदन है।

एफ–91/49, तुलसी नगर, भोपाल मो. 9424413190

ys[k

ulk vfHkeku ekg cl fdcck

vkpk;Mk- jke'oj i lkn xlr

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा विरचित श्रीरामचरितमानस महाकाव्य मानव जीवन को सुखमय बनाने का सुचारु संविधान है। यह सम्पूर्ण लोक का हितकारी है। इस महाकाव्य में एतद्विषयक स्वयं उल्लेख किया गया है कि *"कथा जो सकल लोक हितकारी, सोइ पूछन चह सैलकुमारी।"* रा.च. मा. 1.106.6 *"तुम्ह रघुबीर चरन अनुरागी, कीन्हिहु प्रश्न जगत हित लागी।"* रा.च.मा. । 1.111.8

श्रीरामचरित मानस में भले ही मानव समाज के लिये सही सुपंथ निर्देशन हेतु सहस्राधिक सुभाषित हैं यदि उनमें से किसी एक का भी सही पालन हो, तो मानव उन्नतिपथ पर अग्रसर होता हुआ अपना यशोन्मेष प्रसारित कर सकता है। यहां निरभिमान सद्गुण का मानव की आत्मोन्नति हेतु उत्प्रेरक चिन्तन प्रस्तुत है एवं "अभिमान" का सकल शोकदाता के रूप में निरूपण है।

"विनय" व्यक्ति के लिये सबसे बड़ी उपलब्धि है। विनय पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति का मूल आधार है। अतएव कहा गया है कि "विनयेन सर्वं प्राप्यते।" श्रीरामचरित मानस सर्वप्रथम विनयी बनने का पाठ पढ़ाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी नानापुराण निगमागम के ज्ञाता होते हुये भी अपने को अतिशय विनम्र निरूपित करने में ही परमानन्द का अनुभव करते हैं यथा–

"सीय राममय सब जग जानी, करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।"

रा.च.मा.1–7 घ–2

"कवि न होउँ नहिं वचन प्रवीनू, सकल कला सब विद्या हीनू।।"

रा.च.मा. 1–8–8

"कवित विवेक एक नहि मोरे, सत्य कहउँ लिखि लागद कोरे"।।

रा.च.मा. 1.8.11

"देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गंधर्व।
बंदउँ किंनर रजनिकर, कृपा करहु अब सर्व।।"

रा.च.मा. 1–7 घ

आत्मष्लाघा से अत्यंत दूर एवं परम विनयी भाव से भरपूर गोस्वामी तुलसीदास जी का उक्त शुभ शिवभाव सभी मानवों के मर्मस्पर्श करने में अतुल समर्थ एवं अतुल

सशक्त है। इतना महान व्यक्तित्व, ज्ञान, विज्ञान और अध्यात्म के निकष पर खरा उतरा हुआ संत, महात्मा गोस्वामी तुलसीदास किञ्चितमात्र भी अभिमान के जाल जंजाल में नहीं फँसा। इसे ईश्वर की कृपा कहें या उस पवित्र आत्मा के उन्मेष का पावन प्रभाव अथवा स्वयं की साधना आराधना से अनासक्ति भाव का भव्य दिव्य आगम।

श्रीरामचरितमानस में दो प्रमुख पात्र अभिधेय हैं – एक मर्यादा पुरुषोत्तम "राम" और दूसरा उनका प्रतिद्वंद्वी महाभिमानी राक्षसराज "रावण"। एक विनय–प्रधान और अपर अत्मश्लाघा तथा अभिमान की खान।

श्रीराम अपनी विनम्रता से विश्व बन्द्य बने और राक्षसराज रावण अपने दम्भ और अभिमान से अपने कुल सहित अपना विनाशक। श्रीरामचरित मानस के प्रणेता गोस्वामी जी ने अपनी उक्त कृति के माध्यम से श्रीराम के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय यह प्रश्न उठाकर कराया है कि *"राम कवन प्रभु पूछउँ तोही"*। (रा.च.मा. 1–45–6) उक्त के उत्तर में उन्होंने कहा है कि–

"एक राम अवधेश कुमारा।
तिन्ह कर चरित विदित संसारा।।"

रा.च.मा. 1–1–45–7

पुनश्च गोस्वामी जी ने उन्हीं श्रीराम को मन क्रम वचन अगोचर तथा विष्णु का अवतार सर्वसच्चिदानन्द निरूपित कर लिखा है कि–

"सब कर परम प्रकाशक जोई,
राम अनादि अवधपति सोई।"

रा.च.मा. 1–116–6

"राम ब्रह्म चिनमय अविनासी,
सर्व रहित सब उर पुर बासी"।

रा.च.मा. 1–114–6

"परमातमा ब्रह्म नर रूपा,
होइहि, रघुकुल भूषन भूपा"।

रा.च.मा. 7–47–8

"तिन्ह नृपसुतहि कीन्ह परनामा,
कहिं सच्चिदानन्द परधामा"।

रा.च.मा. 1–49–7

"एक कलप एहि हेतु प्रभु, लीन्ह मनुज अवतार।
सुर रंजन सज्जन सुखद, हरिभंजन भुवि भार।"

रा.च.मा. 1–139

"होहइहु अवध भुआल तब में होब तुम्हार सुत।"

रा.च.मा. 1–15–1

"विप्र धेनु सुर संतहित, लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु, माया गुन गोपार।।"

रा.च.मा. 1–92

"व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन विनत विनोद।
सो अज प्रेम भगति बस, कौसल्या की गोद।।"

रा.च.मा. 1–198

"मन क्रम बचन अगोचर जोई,
दशरथ अजिर बिचर प्रभु सोई।"

रा.च.मा. 1.2.2.5

स्पष्ट है कि श्री रामचरितमानस के नायक "श्रीराम" अवतार पुरुष एवं राजा दशरथ के सुपुत्र के रूप में विश्वविश्रुत रहे हैं। सर्व देवों में श्रेष्ठ श्री राम अपने शील, शालीनता, सत्य, निर्मलता, निश्छलता से ही परिज्ञात हैं। यथा–

"प्रकटे राम कृतज्ञ कृपाला,
रूप शीलनिधि तेज विशाला।"

रा.च.मा. 1–75–5

"जो आनन्द सिन्धु सुख रासी,
सीकर तें त्रैलोक सुपासी।"

रा.च.मा. 1–196–5

"चारिउ सील रूप गुन धामा,
तदपि अधिक सुख सागर रामा"।

रा.च.मा. 1–197–6

"विद्या बिनय निपुन गुन सीला,
खेलहिं खेल सकल नृप लीला।"
रा.च.मा. 1–203–6

"राम कहा सब कौशिक पाहीं,
सरल सुभाउ छुअत छत नाहीं।"
रा.च.मा. 1.236–2

ऐसे सर्वेश्वर श्रीराम की प्राप्ति भी निश्छल मन व्यक्ति को सहज ही होती है। यथा–

"मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई,
भजत कृपा करिअहिं रघुराई।"
रा.च.मा. 1–199.6

"निर्मल मन जन सो मोहि पावा,
मोहि कपट छल छिद्र न भावा।"
रा.च.मा. 5–43–5

उपर्युक्त अपने शील, शालीनता, सत्य एवं सद्वृत्ति से ही श्रीराम हमारे श्रेष्ठ त्रिदेवों में श्रेष्ठ एवं प्रगण्य मान्य किये गये हैं। यथोल्लेख है कि–

"जगु पेखन, तुम्ह देखनि हारे,
बिधि हरि संभु नचावनि हारे।"
रा.च.मा. 2–126.1

"जाके बल विरंचि हरि ईसा,
पालत सृजत हरत दससीसा।"
रा.च.मा. 5–20–5

"संकर सहस विष्नु अज तोही,
सकहिं न राखि राम कर द्रोही।"
रा.च.मा. 5.22.8

"सिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई,
चाहत जासु चरन सेवकाईं।
रा.च.मा. 6.21.1

"शील" मानव का श्रेष्ठ गुण एवं श्रेष्ठ आभूषण है। यथोक्त है कि *"सर्वेषांमपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणम्"*।–नीतिशतक . 8। शालीनता और शांत स्वभाव श्रीराम का अद्वितीय अलौकिक गुण है। अतः ब्रह्मा शम्भु फणीन्द्र आदि श्रेष्ठ देवों से भी वे सेव्य कथ्य हैं। यथा–

"शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदम्।
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिम्।
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूड़ामणिम्।"
रा.च.मा. 5–1

शील और विनय जिसमें समप्रभाव से हो, वह लोक में सृष्टिपर्यन्त पूज्य बनता है। श्रीराम अपने उक्त गुणों से ही पुरुषोत्तम एवं सर्वपूज्य हैं।

अब श्रीरामचरित मानस में वर्णित इस महाकाव्य के खलनायक के विषय में परिज्ञान करना अपेक्षित है। राक्षसराज "रावण" कृति का प्रतिनायक है। पावन पुलस्त्यकुल में उसका प्रभव हुआ है। लेकिन अपने दम्भ और ऋषिश्राप के कारण वह महीश्वर (ब्राह्मण) सपरिवार अघरूप असुर हुआ। यथोल्लेख है कि–

"काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा,
भयउ निसाचर सहित समाजा।"
रा.च.मा. 1–175

"उपजे जदपि पुलस्त्यकुल, पावन अमल अनूप।"
तदपि महीसुर श्राप बस, भए सकल अघरूप।।"
नरा.च.मा. 1–176

राजा रावण बड़ा तपस्वी था। इसकी विद्वता, ज्ञान, बल, वैभव, आदि का वर्णन प्रायः सभी श्रेष्ठ ग्रन्थों में वर्णित है। इसके उग्र तप के विषय में श्रीरामचरित मानस में उल्लेख है कि–

"कीन्ह बिबिध तप तीनिहुँ भाई,
परम उग्र नहिं बरनि सो जाई।"
रा.च.मा. 1–176–1

महातपस्वी होते हुए भी इन राक्षसों के लोभ और अभिमान की अतिशयता ने इन्हें अन्यायी बना दिया था। यथोल्लेख है कि–

"सुख संपति सुत सेन सहाई,
जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई।
नित नूतन सब बाढ़त जाई,
जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई।।

रा.च.मा. 1—179—2

कामरुप जानहिं, सब माया,
सपनेहुँ जिन्हके धरम न दाया।।

रा.च.मा. 1—180.1

सेन बिलोकि सहज अभिमानी,
बोला बचन क्रोध मद सानी।

रा.च.मा. 1—180.4

रावण आदि राक्षस तप बल से प्राप्त समृद्धियों से उद्धत बन गये जबकि ***"अनुद्धता सत्पुरुषाः समृद्धिभिः"*** (नीतिशतक 62), इस उक्ति के अनुसार विनम्र सेना चाहिये। अपार उपलब्धियों से अभिमान और अन्यान्य अवगुणों से सम्पृक्त हुए राक्षसराज रावण और सभी राक्षसगण परम दम्भी बन गये और गुरुवत परमपूज्य माता—पिता तथा देवों की भी अवहेलना तथा तिरस्कार करने लगे। गोस्वामी तुलसीदास ने ऐसे अविनीत प्राणियों को असुर संज्ञा दी है। यथा—

"मानहिं मातुपिता नहि देवा,
साधुन्ह सन करवावहि सेवा।
जिनके यह आचरण भवानी,
ते जानेहु निसिचर सब प्रानी।"

रा.च.मा. 1.183.3

अहंकार व्यक्ति के सर्वनाश का कारण होता है। "रावण" में यह "अहंकार अवगुण" पूरी तरह घर कर गया था। वह स्वयं को ही सृष्टि का कर्ताधर्ता मानने लगा था। अहंकारी विवेक भ्रष्ट हो जाता है। यथोक्त है, कि ***"अहंकार विमूढात्माकर्त्ताहमिति मन्यते"*** । श्रीमद्भगवद्गीता 3.27 ।
अहंकारी तो परमात्मा के द्वेषी कहे गये हैं यथा—

"अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः।।"

गीता 16—18

श्रीरामचरितमानस में रावण का अहंकार ही उसके सर्वनाश का आधार निरूपित किया गया है। अहंकारी का क्रोध उसके लिये महापापमय छल का प्रणेता बनता है। वह कुपथगामी बन जाता है। यथोक्त है कि—

"जाके डर सुर असुर डेराहीं,
निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं।
सो दससीस श्वान की नाईं,
इत उत चितइ चला भड़िआईं।"

रा.च.मा. 3.27.89

देखिये, सर्वसमर्थ होने पर भी अहंकारी व्यक्ति की कितनी दयनीय एवं कारुणिक स्थिति हो जाती है। केवल सच्चरित्र और सन्मार्ग ग्रहण ही अहंकार का नाशक है। श्रीराम शुभचरित्र और सन्मार्ग का प्रतीक हैं। इसीलिये गोस्वामीजी राक्षसराज रावण को उसके कुलीन कुल की दुहाई देते हुये सद्वृत्ति रूप राम में रमने की प्रेरणा देते हुये कहते हैं कि—

"रामचरन पंकज उर धरहू,
लंका अचल राज तुम्ह करहूं।"

रा.च.मा. 5.22.1

"राम नाम बिनु गिरा न सोहा,
देखु बिचारि त्याग मद मोहा।"

रा.च.मा. 5.22.3

"राम विमुख सम्पति प्रभुताई,
जाइ रही पाई बिनु पाई।"

रा.च.मा. 5.22.5

राक्षसराज रावण के माध्यम से लोक को उसके कल्याण हेतु गोस्वामी तुलसीदास ने अभिमान को पूरी तरह त्याज्य कहा है। यथा—

"मोह मूल बहु सूल प्रद, त्यागहु तम अभिमान।

भजहु राम रघुनायक कृपासिन्धु भगवान"।।
रा.च.मा. 5.23

वस्तुतः भगवान की कृपा के बिना अभिमानी व्यक्ति अपने विनाशक अभिमान को छोड़ने के लिये राजी ही नहीं होता। यथोक्त है कि–

"जदपि कही कपि अति हितवानी,
भगति बिबेक बिरति नय सानी।
बोला बिहसि महा अभिमानी,
मिला हमहिं कपि गुरु बड़ ज्ञानी।।'
रा.च.मा. 5.23.2.3

अभिमानी व्यक्ति का अभिमान सहज स्वभाव बन जाता है। वह सदैव आत्मश्लाघा में ही डूबा रहता है। यथा रावण के चरित्र वर्णन में गोस्वामीजी ने स्पष्ट किया है कि–

"कंपहि लोकप जाकी त्रासा,
तासु नारि सभीत बड़ि हासा।
रा.च.मा. 36

"सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना,
जग जोधा को मोहि समाना।"
"बरुन कुबेर पवन जमकाला,
भुजबल जितेउँ सकल दिगपाला।'
"देव दनुज नर सब बस मोरे,
कवन हेतु उपजा भय तोरे।।'
रा.च.मा. 6.7.2

"सुनु सठ सोइ रावन बलसीला,
हरगिरि जान जासु भुज लीला।'
रा.च.मा. 6.24.1

"जासु चलत डोलति इमि धरनी,
चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी।'
"सोइ रावन जग बिदित प्रतापी,
सुनेहि न श्रवन अलीक प्रलापी।'
रा.च.मा. 6.24.7

"सूर कवन रावन सरिस, स्वकर काटि जेहि सीस।
हुने अनल अति हरष बहु बार साखि गौरीस"।
रा.च.मा. 6–28

अभिमानी व्यक्ति अपने मुख से ही अपनी अनन्त बड़ाई करता है। इसमें उसे लाज भी नहीं आती। रावण के विषय में एतद्विषयक कथन है कि–

"लाजवन्त तब सहज सुभाऊ,
निज मुख निज गुन कहसि न काऊ।।'
रा.च.मा. 6.28.6

अभिमानी व्यक्ति न तो अभिमान त्याग में किसी की मानता है और न ही गलतियां या अपराध करने पर निर्लज्जता का अनुभव करता। वस्तुतः दम्भ उसके सिर बैठकर मंडराता रहता है और फिर वही दम्भ या अभिमान ही उसका सर्वनाश कर देता है। रामचरितमानस में वर्णित रावण के अतिरिक्त दक्ष प्रजापति तथा राजा प्रताप भानु का भी अभिमान के कारण ही विनाश हुआ था। अभिमानी व्यक्ति अभिमान के बदले मिले हुए संत्रास को भी अविलम्ब भूल जाता है। रावण अपने पुत्रों के मरण का संत्रास भूलकर सुख अनुभव कर रहा था। यथोक्त है कि–

"नारि बचन सुनि बिसिख समाना,
सभाँ गयउ उठि होत बिहाना।'
रा.च.मा. 6–37–1

"बैठ जाइ सिंघासन फूली,
अति अभिमान त्रास सब भूली।'
रा.च.मा. 6–37–2

"उमा रावनहिं अस अभिमाना,
जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना।'
रा.च.मा. 6–9–6

अभिमानी व्यक्ति गर्जना बहुत करता हैं रावण का भी यही स्वभाव था। यथा–

"गर्जेउ मूढ़ महा अभिमानी,
धायउ दसहु सरासन तानी।'
रा.च.मा. 6–92–2

यह रावण का अभिमान था, जिसके कारण उसके कुल में उसके लिये कोई रोने वाला शेष नहीं रहा। यथोल्लेख है कि

"राम विमुख अस हाल तुम्हारा।
रहा न कोउ कुल रोवनि हारा।'

रा.च.मा. 6–103–10

अहंकार उस परब्रह्म परमात्मा को पसंद ही नहीं। वस्तुतः किसी भी देव को अभिमान स्वीकार नहीं है। कागमुसुण्डि ने अपने पूर्व जनम में गुरुजी का अपमान किया और उनके आने पर उनके आदरार्थ खड़े नहीं हुए तो शिवजी ने यह अपमान सहन न करते हुये उन्हें अनेक दुःखद जन्म लेने का अभिशाप दिया था। यथोक्त है कि–

"जे सठ गुर सन इरिषा करहिं,
रौरव नरक कोटि जुग परहीं।'

रा.च.मा. 7–106ख–5

श्रीरामचरित मानस के नायक श्रीराम विनम्र व्यक्ति के समक्ष और अधिक विनम्र बन जाते हैं, वहीं रावण विनयी व्यक्ति के आगे भी और भी अधिक अभिमानी बन जाता है। अभिमान आने का मतलब है उस परब्रह्म परमेश्वर को खो देना अर्थात् अपने से विलग कर देना। यथोक्त है कि–

"होइहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना,
सो खोवै चह कृपा निधाना"

रा.च.मा. 7–61–8

गोस्वामी तुलसीदास स्पष्ट करते हैं कि "अभिमान" सम्पूर्ण प्रकार से (चारों ओर से) शोक प्रदान करने वाला होता है। यथोक्त है कि–

"संसृत मूल सूलप्रद नाना,
सकल सोकदायक अभिमाना।'

रा.च.मा. 7–73ख–6

गोस्वामीजी यह भी स्पष्ट करते हैं कि अहंकार गाँठ का भयावह रोग अर्थात् केन्सर जैसा महादुःखदाई होता है। यथा–

"अहंकार अति दुखद डमरुआ,
दंभ कपट मद मान हरुआ"।

रा.च.मा. 7–120 ख–35

अब प्रश्न उठता है कि "अहंकार" कैसे निराकृत हो अथवा कैसे जाए ?इसका बहुत सुन्दर समाधान श्री रामचरित मानस में है कि अहंकार की निवृत्ति के लिए सत्संग और ईश्वर की भक्ति में परम आधेय हैं। यही अभिमान से मुक्त करते हैं–

"सुनि आचरज करै जिन कोई,
सत्संगति महिमा नहिं गोई।'

रा.च.मा. 1–2.2

"बिनु सत्संग विवेक न होई,
रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।'

रा.च.मा. 1–2–7

"रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्वान।
ग्यानवन्त अपि सो नर पसु बिनु पूँछ विषान।।'

रा.च.मा. 7–78 क

अभिमान रूप महाशत्रु के निराकरण के लिये व्यक्ति के अन्तस् से या अन्य बहिर् सुस्थानों से प्रेरणाएँ निरन्तर प्राप्त होना अनिवार्य है तभी व्यक्ति का अभिमान के प्रतिमोह तिरोहित हो सकेगा और तभी "नृप अभिमान मोह बस किंवा" (श्रीरामचरितमानस 6–19–5) सूक्ति सार्थक सिद्ध होगी, जो लोककल्याणकारी बनेगी।

श्रीमती लक्ष्मीगुप्ता, भवन, उद्योग विभाग के पास, सिविल लाइन्स,
दतिया (म.प्र.) 475661 सम्पर्क सूत्र– 9826249448

ys[k

Hkxoku jke dk lan'k lhrkth dk

Mk- xkxh'kj.k feJk ^ejky*

सामान्यतः लोग यही जानते हैं कि अशोकवाटिका में सीताजी को भगवान राम का संदेश हनुमान जी ने सुनाया। लेकिन वास्तविकता यह है कि अशोक वाटिका में सीता जी को भगवान राम का संदेश स्वयं भगवान राम ने ही सुनाया। आप प्रश्न करेंगे कि जब भगवान राम वहां थे ही नहीं तब उन्होंने सीता जी को संदेश कैसे सुनाया ? इस प्रश्न का उत्तर आपको निम्नांकित तथ्यों को जानने के बाद मिल जायेगा :

1. सबसे पहले हमें यह जानना होगा कि संदेश सुनाये जाते समय हनुमान जी की क्या दशा थी। इस संबंध में रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं–

रघुवर कर संदेश अब सुन जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे विलोचन नीर।।

संदेश सुनाने के पहले ही हनुमान जी गदगद हो गये और उनकी आँखें आँसुओं से भर गईं। ऐसी मनोदशा में व्यक्ति अवाक हो जाता है– एक शब्द भी बोल नहीं सकता। स्पष्ट है कि हनुमान जी संदेश सुनाने की स्थिति में ही नहीं थे। तब यह सोचना कि उन्होंने संदेश सुनाया उचित नहीं।

2. प्रश्न उठता है कि संदेश सुनाने के पहले हनुमान जी की ऐसी दशा क्यों हुई? इसका कारण यह था कि हनुमान जी चाहते थे कि सीताजी को अपना संदेश भगवान राम स्वयं सुनायें ताकि सीताजी को विशेष प्रसन्नता हो। अतः हनुमान जी ने अपने हृदय में विराजे भगवान राम से इस हेतु अनुरोध किया। भगवान राम ने हनुमान जी का यह अनुरोध स्वीकार कर लिया। बस यही कारण था जिसने हनुमान जी को हर्ष से गदगद कर दिया और उनकी आँखों से खुशी के आँसुओं की बरसात होने लगी।

3. इस प्रकार भगवान राम ने स्वयं सीता जी को अपना संदेश सुनाया। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि सारा संदेश उत्तम पुरुष में कहा गया है। संदेश के पहले और अंतिम वाक्य ऐसे हैं कि हनुमान जी उन्हें संकोचवश सीता जी से कह ही नहीं पाते। ये वाक्य हैं–

(क) *कहेउ राम वियोग तब सीता।*

मोकहुँ सकल भये विपरीता।।

(ख) *तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।*
जानत प्रिया एक मन मोरा।।
सो मन सदा रहत तोहिं पाहीं।
जान प्रीत रस इतनेहिं माहीं।।

भगवान राम द्वारा सीता जी से उत्तम पुरुष में कहे गये ये वाक्य हनुमान जी संकोवचवश सीता जी से कह ही नहीं सकते थे। इसीलिए हनुमान जी को यह संदेश स्वयं भगवान राम के माध्यम से ही सुनवाया।

4. गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में स्वयं भी यह स्पष्ट किया है कि सीताजी को संदेश भगवान राम द्वारा ही दिया गया। वे स्पष्ट लिखते हैं– *"कहेउ राम वियोग तव सीता"*। यदि संदेश हनुमान जी, द्वारा दिया गया होता तो गोस्वामी तुलसीदास स्पष्ट लिखते– *"कह हनुमंत वियोग तब सीता"*। किन्तु गोस्वामी तुलसीदास ने ऐसा न तो लिखा न ही कोई संकेत दिया।

1436 बी सरस्वती कॉलोनी चेरीताल वार्ड, जबलपुर–482002 (म.प्र.)

ifr"Bku d vkxkeh dk;Øe

रामनवमी महोत्सव

13 अप्रैल से 18 अप्रैल तक

शनिवार 13 अप्रैल 19	प्रातः 9:30 बजे	संगीतमय सुंदरकांड
	अपरान्ह 12:00 बजे	रामजन्मोत्सव/महाआरती/प्रसाद वितरण
रविवार 14 अप्रैल 19	संध्या 7:00 बजे	रामलीला मंचन/भजन संध्या
सोमवार 15 अप्रैल 19	संध्या 7:00 बजे से	भजन संध्या
मंगलवार 16 अप्रैल 19 से शुक्रवार 19 अप्रैल 19 तक	संध्या 6:30 बजे	रामकथा –पं. उमाशंकर व्यास द्वारा लक्ष्मण चरित्र पर प्रवचन
शनिवार 22 जून से गुरुवार 29 जून तक	कार्यालय समय	प्रबंधकारिणी समिति निर्वाचन
शुक्रवार 30 जून 19	प्रातः 10 बजे	• नवनिर्वाचित सदस्यों की उपस्थिती एवं चुनाव प्रमाणपत्र की प्रस्तुति • प्रोटेम स्पीकर जस्टिस श्री आर.डी. शुक्ल • नई प्रबंधकारिणी समिति की प्रथम बैठक • मनोनीत सदस्य एवं कार्यकारिणी के पदों का चयन
बुधवार 17 जुलाई 19	प्रातः 11:00 बजे	आजीवन सदस्यों की सामान्य सभा की बैठक

ys[k

thfor 'ko&le pkng ik.kh

dey egrk

गोस्वामी तुलसीदास कृत महाकाव्य श्रीरामचरितमानस के लंकाकांड में अंगद–रावण संवाद एक उल्लेखनीय घटना है। इसके द्वारा बालि पुत्र अंगद रावण की सभा में रावण को सीख देते हुए बताते हैं कि ऐसे 14 दुर्गुण हैं जिनके होने से मनुष्य मृतक के समान माना जाता है। हो सकता है कि महाराज! आप भी ऐसे 14 प्रकार के लोगों में से कोई एक हों। ऐसा विचार कर मैं आपका वध नहीं करना चाहता। ये चौदह दुर्गुण हैं–

"कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।।
सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत विरोधी।।
तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सव सम चौदह पानी।।
असि बिचारि खल बधउँ न तोही। अब जनि रिस उपजावसि मोही।।"

आओ, अंगद द्वारा बताये गये इन चौदह दुर्गुणों पर विचार करें–

पहला मृतक व्यक्ति, वाममार्गी। इसे उस दौर में कौल कहा जाता था। कौल मार्ग अर्थात तांत्रिकों का मार्ग। कापालिक संप्रदाय के लोग भी इससे जुड़े हैं। जादू, तंत्र, मंत्र और टोने टोटकों में विश्वास करने वाले भी कौल हो सकते हैं। हालांकि इसके अर्थ को और भी विस्तृत किया जा सकता है। आजकल वामपंथी विचारधारा के लोग जो कर रहे हैं वह कौल ही हैं। कौल या वाम का अर्थ यह है कि जो व्यक्ति पूरी दुनिया से उल्टा चले। जो संसार की हर बात के पीछे नकारात्मकता खोज ले और जो नियमों, परंपराओं और लोक–व्यवहार का घोर विरोधी हो, वह वाममार्गी है। ऐसा काम करने वाले लोग समाज को दूषित ही करते हैं। ये लोग उस मुर्दे के समान है जिसके संपर्क में आने पर कोई भी मुर्दा बन जाता है। वामपंथ देश, समाज और धर्म के लिए घातक है।

दूसरा मृतक व्यक्ति,.. कामुक। चौपाई में कामवश लिखा है। काम का अर्थ भोग और संभोग दोनों ही होता है। बहुत से लोगों के लिए उनकी जिंदगी में सेक्स ही महत्वपूर्ण होता है। कहते हैं अत्यंत भोगी, विलासी और कामवासना में ही लिप्त रहने वाला व्यक्ति धीरे–धीरे मौत के मुंह में स्वतः ही चला जाता है। ऐसा व्यक्ति वक्त के पहले ही बूढ़ा हो जाता है। उसे हर तरह के रोग या शोक घेर लेते हैं। ऐसे

व्यक्ति के मन की इच्छाएं कभी पूर्ण नहीं होतीं। वह कुतर्की भी होता है। जिसके मन की इच्छाएं कभी खत्म नहीं होतीं और जो प्राणी सिर्फ अपनी इच्छाओं के अधीन होकर ही जीता है, वह मृत समान है।

तीसरा मृतक व्यक्ति... कृपण। चौपाई में कृपिन शब्द का उपयोग किया गया है जिसे हिन्दी में कृपण कहते हैं। कृपण को प्रचलित शब्द में कंजूस कह सकते हैं। लेकिन कृपण तो महाकंजूस होता है। चमड़ी जाए पर दमड़ी न जाए, वाली कहावत को वह चरितार्थ करता है। ऐसे व्यक्ति द्वारा अर्जित धन का उपयोग न तो वह स्वयं कर पाता है और न ही उसका परिवार। अति कंजूस व्यक्ति को मृतक समान माना गया है। ऐसा व्यक्ति धर्म–कर्म के कार्य करने में, आर्थिक रूप से किसी कल्याण कार्य के लिए दान देने या उसमें हिस्सा लेने से बचता है।

चौथे तरह का मृतक व्यक्ति ... विमूढ़। चौपाई में विमूढ़ा लिखा है। विमूढ़ को अंग्रेजी में कंफ्यूज्ड व्यक्ति कहते हैं। इसे भ्रमित बुद्धि का व्यक्ति भी कह सकते हैं। इसे ग़फ़लत में जीने वाला और अपने विचारों पर दृढ़ नहीं रहने वाला व्यक्ति भी कह सकते हैं।

कुल मिलाकर ऐसा व्यक्ति मूढ़ और मूर्ख होता है। ऐसा व्यक्ति खुद कभी निर्णय नहीं लेता। उसकी जिंदगी के हर फैसले कोई दूसरा ही करता है। अब सोचिए हर काम को समझने या निर्णय को लेने में किसी अन्य पर आश्रित रहने वाले व्यक्ति को मृतक समान ही तो मानेंगे। ऐसे ही लोग ईश्वर को छोड़कर कथित बाबाओं, ज्योतिषियों और चमत्कार दिखाने वाले ढोंगी लोगों के यहां शरण लिए हुए होते हैं।

पांचवां मृतक व्यक्ति... अति दरिद्र। इस दरिद्र शब्द का अर्थ गरीब या निर्धन नहीं होता है। यदि आपके घर में कचरा फैला है सामान अस्त–व्यस्त बिखरा हुआ है तो लोग कहते हैं कि क्या दरिद्रता फैला रखी है। दरिद्रता का संबंध गंदगी से भी है। स्वच्छता से दरिद्रता का नाश होता है। आप कितने ही गरीब हों, लेकिन स्वच्छ रहेंगे तो धनवान बनने के रास्ते खुलते जायँगे। दरिद्रता एक रोग के समान है। गरीबों की गरीबी दूर करने के हर उपाय उस व्यक्ति को, उसके समाज और उसकी सरकार को करना चाहिए। यदि समाज में कोई व्यक्ति दीनहीन, दुखी या दरिद्र है तो उसकी जिम्मेदारी सभी की बनती है। गरीबों को अमीर बनाने का लक्ष्य होना चाहिए और यह तभी होगा जबकि हम दरिद्रता से घृणा करने लगेंगे। दरिद्र से नहीं दरिद्रता से घृणा करना जरूरी है। दरिद्रता कई प्रकार की होती है, कोई धन से, कोई आत्मविश्वास से, कोई साहस से, कोई सम्मान से और कोई ज्ञान से दरिद्र होता है, लेकिन जिस व्यक्ति में यह सभी दुर्गुण विद्यमान हैं वह अति दरिद्र व्यक्ति माना गया है। ऐसा व्यक्ति मृतक समान है।

छठा मृतक व्यक्ति... अजसि। ब्रज मंडल में यश को 'जस' कहा जाता है। यह अजसि शब्द इसी से बना है। इसे अपयश कहते हैं। अर्थात जिसके पास यश नहीं, अपयश है। इसे उर्दू में बदनामी कह सकते हैं। समाज में ऐसे कई व्यक्ति हैं जिनका घर, परिवार, कुटुंब, समाज, नगर और राष्ट्र आदि किसी भी क्षेत्र में कोई सम्मान नहीं होता है या जिसने कभी सम्मान अर्जित ही नहीं किया। ऐसे व्यक्ति जो विख्यात तो नहीं लेकिन कुख्यात जरूर हैं। किसी भी कारणवश वह बदनाम हो गया है। बद से बदनाम बुरा। समझदार व्यक्ति हर प्रकार का नुकसान उठाने के लिए तैयार रहता है– बदनामी से बचने के लिए। बदनामी से सबकुछ नष्ट हो जाता है। बदनाम व्यक्ति भी मृतक व्यक्ति के समान होता है।

सातवां मृतक व्यक्ति– अति बूढ़ा। अत्यंत वृद्ध व्यक्ति भी मृत समान होता है, क्योंकि वह अन्य लोगों पर आश्रित हो जाता है। यदि आपके शरीर

और बुद्धि दोनों ने ही काम करना बंद कर दिया है और फिर भी आप जिंदा हैं तो ऐसे जीने का क्या मतलब। ऐसे अति बूढ़े व्यक्ति के बारे में उसके परिजन ही उसकी मृत्यु की कामना करने लगते हैं। उनमें से कुछ कहते हैं कि हम चाहते हैं कि उनको कष्टों से छुटकारा मिल जाए इसीलिए हम ऐसी कामना करते हैं। हालांकि कुछ लोगों के अनुसार वे खुद ही इस तरह के बूढ़े व्यक्ति से छुटकारा पाना चाहते हैं जिसकी सेवा में वे दिनरात लगे हुए हैं। हो सकता है कि घर के कुछ सदस्य ऐसा नहीं सोचते हों। लेकिन क्या यह जिंदगी सही है ?

आठवां मृतक व्यक्ति... सदा रोगवश। घर में कोई ऐसा व्यक्ति हो सकता है जो किसी न किसी रोग से हमेशा ग्रस्त ही रहता हो। निरंतर रोगग्रस्त रहने वाले व्यक्ति को भी मृतक समान ही माना गया है। ऐसे व्यक्ति का मन हमेशा विचलित रहता है। नकारात्मकता उस पर हावी रहती है। हमेशा नकारात्मक सोचते रहने से भी उसके स्वस्थ होने में रुकावट पैदा हो जाती है। ऐसा व्यक्ति खुद ही मरने की सोचने लगता है जो कि गलत है। इस तरह की सोच से वह जीवित होते हुए भी स्वस्थ्य जीवन के आनंद से वंचित रह जाता है और मृतक समान हो जाता है।

नौवां मृतक व्यक्ति– संतत क्रोधी। निरंतर क्रोध में रहने वाले व्यक्ति को तुलसीदासजी ने संतत क्रोधी कहा है। हर छोटी–बड़ी बात पर जिसे क्रोध आ जाए ऐसा व्यक्ति भी मृतक के समान ही है। क्रोधी व्यक्ति का अपने मन और बुद्धि, दोनों ही पर नियंत्रण नहीं रहता है। जिस व्यक्ति का अपने मन और बुद्धि पर नियंत्रण न हो, वह जीवित होकर भी जीवित नहीं माना जाता है। ऐसा व्यक्ति न खुद का भला कर पाता है और न परिवार का। उसका परिवार उससे हमेशा त्रस्त ही रहता है। सभी उससे दूर रहना पसंद करते हैं।

दसवां मृतक व्यक्ति.... विष्णु विमुख। इसका अर्थ है भगवान विष्णु के प्रति प्रीति नही रखने वाला, अस्नेही या विरोधी। इसे ईश्वर विरोधी भी कहा गया है। ऐसे परमात्मा विरोधी व्यक्ति मृतक के समान हैं। ऐसे अज्ञानी लोग मानते हैं कि कोई परमतत्व है ही नहीं। जब परमतत्व है ही नहीं तो यह संसार स्वयं ही चलायमान है। हम ही हमारे भाग्य के निर्माता हैं। हम ही संसार चला रहे हैं। हम जो करते हैं, वही होता है। अविद्या से ग्रस्त ऐसे ईश्वर विरोधी लोग मृतक के समान हैं जो बगैर किसी आधार और तर्क के ईश्वर को नहीं मानते हैं। उन्होंने ईश्वर के नहीं होने के कई कुतर्क एकत्रित कर लिए हैं।

ग्यारहवां मृतक व्यक्ति... श्रुति और संत विरोधी। वेदों को श्रुति कहा गया है और रामायण, पुराण आदि सब स्मृतियां हैं। यहां तुलसीदासजी कह रहे हैं कि श्रुति विरोधी अर्थात् वेद विरोधी इस धरती पर मृतक के समान हैं। वेद का अर्थ होता है ज्ञान। इस वेद शब्द से ही वेदना शब्द बना है जिसे ज्ञान की पीड़ा माना जाता है। वेद का अर्थ जांचा परखा और जाना गया ज्ञान। वेद का अर्थ देखा और प्रत्यक्ष सुना गया ज्ञान। परमात्मा ने चार ऋषियों को यह ज्ञान सुनाया। ये चार ऋषि हैं... अग्नि, वायु, अंगिरा और आदित्य।

संत–विरोधी... बहुत से संत आजकल स्वयंभू संत हैं। हिन्दू संत धारा में संत तो 13 अखाड़े और दसनामी संप्रदाय में दीक्षित होकर ही बनते हैं। ऐसे में संत की परिभाषा को समझना जरूरी है। स्वयंभू भी संत हो सकता है और दीक्षित व्यक्ति भी, जिसने वैदिक यम–नियमों का पालन किया, ध्यान, क्रिया और प्राणायाम का तप किया, वही संत होता है। इसके अलावा ज्ञान और भक्ति में डूबे हुए लोग भी संत होते हैं। संत का विरोधी भी इस धरती पर मृतक समान है।

बारहवां मृतक व्यक्ति... तनु पोषक। तनु पोषक का अर्थ खुद के तन और मन को ही पोषित करने वाला। खुद के स्वार्थ और आत्म–संतुष्टि के लिए ही जीने वाला व्यक्ति। ऐसे व्यक्ति के मन में किसी भी अन्य के लिए कोई भाव या संवेदना नहीं होती। ऐसे बहुत से लोग जो खाने–पीने में, पहनने–ओढ़ने में, घूमने–फिरने में हर बात में सिर्फ यही सोचते हैं कि सारी चीजें पहले मुझे मिले, बाकी किसी अन्य को मिले न मिले। ऐसे लोगों के मन में अपने परिवार, समाज और राष्ट्र के लिए कोई भावना नहीं होती है। यह सभी के लिए अनुपयोगी और मृतक समान हैं। ये खुद ही कमाई को खुद पर ही खर्च तो करेंगे ही दूसरे की कमाई को भी खाने की आस रखेंगे। ऐसे व्यक्ति भी मृतक के समान ही होते हैं।

तेरहवां मृतक व्यक्ति.... निंदक। हालांकि कबीरदासजी ने कहा है कि *'निंदक नियरे राखिए, आंगन कुटी छबाय। बिन पानी, साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।।* लेकिन तुलसीदासजी यहां जिस निंदक व्यक्ति की बात कर रहे हैं वह जरा अलग किस्म का है। कई ऐसे लोग होते हैं जिनका काम ही निंदा करना होता है। उन्हें इससे मतलब नहीं रहता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। उन्हें तो दूसरों में कमियां ही नजर आती हैं। कटु आलोचना करना ही उनका धर्म होता है। ऐसे लोग किसी के अच्छे काम की भी आलोचना करने से नहीं चूकते हैं। ऐसे व्यक्ति जो किसी के पास भी बैठें तो सिर्फ किसी न किसी की बुराई ही करें। ऐसे लोगों से बचकर ही रहें।

चौदहवां मृतक व्यक्ति... अघ खानी। समाज में ऐसे बहुत से लोग हैं जो पापकर्म के द्वारा धन या संपत्ति अर्जित करके अपना और परिवार का पालन–पोषण करते हैं। ऐसे व्यक्ति भी मृत समान ही हैं। उसके साथ रहने वाले लोग भी उसी के समान हो जाते हैं। पाप की कमाई से अंततः किसी का भला नहीं होगा।

10, कुम्भानगर, चित्तोड़गढ़–312001 (राजस्थान)

तुलसी मानस प्रतिष्ठान के आजीवन सदस्यों की अंतिम सूची 1 अप्रैल 2019 को प्रकाशित हो गयी है जो तीन भागों में होगी –

प्रथम भाग – पृष्ठ 1 से 3 – दानदाता सदस्य
द्वितीय भाग – पृष्ठ 4 से 67 – सामान्य आजीवन सदस्य
तृतीय भाग – पृष्ठ 68 – संस्थागत सदस्य

सूची का अवलोकन कार्य दिवस में दोपहर 12:00 बजे से 4:00 बजे तक किया जा सकता है।

;k=k laLej.k

ifo= d yk'k ekul jkoj ;k=k

Jkhe rh tkudh 'kDyk

भक्ति का मुख्य उद्देश्य मन का अलौकिक सुख है। फिर आशुतोष भोले भंडारी की आराधना तो शोक दुःख, भय का निवारण कर दिव्य परम पावन अद्‌भुत सुख का अनुभव कराती है।

गंगाधारी शिव का अवतरण जन कल्याण, अनन्य भक्ति एवं मुक्ति हेतु हुआ है। शिव की भक्ति उपासना, सबसे अधिक फलदायी है, जो प्रारब्ध को भी बदल देती है। "कैलाश मानसरोवर" यात्रा का विवरण यदा–कदा ही पढ़ने सुनने में आता है। "ऊँ नमः शिवाय" शिव शंभु का महामंत्र है। कैलाश मानसरोवर की यात्रा विलक्षण यात्रा है। यात्रा में जितना भाव भरा है, उतना बुद्धि में नहीं आता। जितना बुद्धि में आता उतना मन में नहीं आता। जितना मन में आता उतना कहने में नहीं आता। जितना कहने में आता उतना लिखने में नहीं आता। शिव भक्ति असीम है। भारत की सभी धार्मिक यात्राओं का निचोड़ है, जो अमृत तुल्य है।

"पवित्र, कैलाश मानसरोवर" समुद्र तल से **6740** मीटर की ऊँचाई पर उत्तर दिशा में स्थित है। कैलाश पर्वत "शिव पार्वती" का निवास स्थान है, जो अपने नैसर्गिक सौन्दर्य से पूरे विश्व में जाना जाता है। तभी तो विश्व सैलानी इस पवित्र भूमि पर प्रतिवर्ष आया करते हैं। यह चार धर्मों को अपनी ओर आकर्षित करता है। हिन्दू के लिये यह स्वर्ग और अनादिकाल से देवों के देव शिव का निवास स्थान है। तिब्बती, जैन, बौद्ध धर्म के लोग इसे अपने प्रथम धर्म संस्थापक का निवास मानते हैं। मानसरोवर झील ब्रह्मा के मानस से प्रकट हुई है। तिब्बती यह विश्वास करते हैं कि उनके धर्म गुरु "डेमचोंग" कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं। वेद, पुराण शास्त्रों में भी शिव की महिमा का बखान बार–बार आया है। हिमालय की सारी चोटियों पर पर्वतारोहियों ने अपनी ध्वजा–पताका फहराई है किन्तु पवित्र कैलाश पर अपनी विजय की दुंदुभी बजाने का साहस कोई मानव नही कर पाया।

"शिव लिंग" के आकार में स्थित यह कैलाश पर्वत प्रतिपल शिवलिंग एवं जलहरी का आभास कराता है। कैलाश पर्वत की परिक्रमा तीन दिन में पूर्ण होती है, जो बड़े–बड़े पर्वतारोहियों को भी कठिनाई का अनुभव करा देती है। परिक्रमा अत्यंत कठिन होने पर भी भोलेनाथ बड़े कृपालु हैं। वे अपने भक्तों को निराश नहीं

करते। दुर्गम को भी सुगम बना देते हैं। इसकी जड़ें गहरी हैं। इसकी ऊँचाई मानो स्वर्ग को स्पर्श करती है। असहाय और निर्बल भोलेनाथ के दरबार में कोई नहीं है। बस, आपका मनोबल, दृढ़ इच्छा –शक्ति सबल होनी चाहिये। ईश कृपा से ही अंधा देखने लगता है और लंगड़ा चलकर (काशी) कैलाश पर्वत की परिक्रमा कर लेता है। यह है हमारा अटूट–विश्वास एवं प्रभु के प्रति लगन व आस्था।

हिन्दू धर्म, वेद, पुराण शास्त्र कहते हैं, कैलाश मानसरोवर यात्रा उन्हें दुःखों से मुक्ति दिलाती है। स्नान, पूजा अर्चना उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति कराते हैं। मानसरोवर झील माँ पार्वती का स्वरूप है। कहते हैं माँ सती का दाहिना हाथ यहां गिरा था। अतः यह सरोवर शक्ति–पीठ के स्वरूप में पूजनीय है। यहां आकर बुराई छूट जाती है और पूरे शरीर में प्रकाश व्याप्त हो जाता है। सभी तीर्थयात्री अनुभव करते हैं। उन्हें अनुपम शान्ति का खजाना प्राप्त होता है, जो अकथनीय है।

सम्पूर्ण भारत की तीर्थयात्रा पूर्ण करने के पश्चात् मन में एक अधूरापन खलता रहता था कि हमने कैलाश मानसरोवर की यात्रा नहीं की। इस दुर्गम यात्रा की कल्पना से मेरा मन सिहर उठता था। पर भोलेनाथ की कृपा अपरम्पार है। 12 ज्योतिर्लिंग के दर्शन के बाद शिव भंडारी की कुछ ऐसी कृपा हुई कि हमने कैलाश मानसरोवर यात्रा का संकल्प मन में ठान लिया। स्वास्थ्य परीक्षण, दवा, गरम कपड़े, नाना प्रकार की अन्य सामग्री हमने समेटना शुरू कर दी। ईश आराधना, संत–मुनियों का आशीर्वाद सब कुछ जाने के पूर्व प्राप्त किया। तीन का अंक हमारे लिये बड़ा शुभ रहा। शिव के तीन नेत्र हैं। तीन पत्रों की बेलपत्री शिव को चढ़ाई जाती है। शिव आदि, अनादि, अनन्त, अखण्ड, अभेद हैं। वे भक्त बड़े भाग्यशाली हैं जो अलख, अगोचर, सदाशिव की नित आराधना करते हैं। हम तीन सुनीता, रजनी और मैं स्वय, हम तीनों ने सिलसिलेवार अपनी तैयारी शुरू कर दी। तीनों की ईश भक्ति अपने–अपने ढंग की निराली थी। औढरदानी शिव उदार हैं। शिव हर पापों का नाश करने वाले हैं। श्रीराम भी शिव की आराधना में लीन है। तभी तो गो. तुलसीदास ने एक चौपाई में श्रीराम "शिव द्रोही मम दास कहावा, सो नर सपनेहूँ मोहि न भावा।"

नेपाल की राजधानी काठमाण्डू से हमारी यात्रा ऋचा ट्रेवल्स के द्वारा प्रारंभ हुई। यहां आक्सीजन की कमी, रात्रि का तापमान–0 डिग्री था। हमारा ग्रुप लीडर नूरीन था। जो 24 साल की उम्र में माउण्ट एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ चुका था। दूसरे दिन हमारी यात्रा पशुपतिनाथ भगवान शिव के दर्शन से प्रारंभ हुई और अंतिम पड़ाव भी पवित्र कैलाश पर्वत में साक्षात् शिव के दर्शन से समाप्त हुआ। निर्मल मन लिये यात्री पल–पल अपने ग्रुप का मनोबल बढ़ाते रहे। सर्वप्रथम हमारे दर्शन मानसरोवर झील के होते हैं। दर्शन व बुद्ध पूर्णिमा के दिन पवित्र मानसरोवर में स्नान का सौभाग्य हम सबको मिला। वहीं से पवित्र जल व शिवलिंग का चयन हम सब यात्रियों ने किया। अष्टपाद नदी के दर्शन कर हम यमद्वार तक पहुंचे। कैलाश पर्वत की परिक्रमा 14 किमी. की है जो तीन दिन में पूर्ण होती है। मार्ग में बर्फ की अधिकता होने पर यह परिक्रमा अधूरी रह जाती है। धन्य है वे ऋषि–मुनि जो अपने तप के बल पर शिव का साक्षात्कार करते हैं। पग–पग पर आक्सीजन की समस्या तीर्थयात्रियों को महसूस होती है। किन्तु पूर्ण तैयारी व कपूर के द्वारा हमारी यात्रा सकुशल पूर्ण हुई। अनेक चमत्कारिक अनुभव शिव भक्तों से सुनने को मिले।

ऋचा ट्रेवल्स ने हमारी यात्रा का भरपूर ख्याल रखा। 15 दिन की यह यात्रा सिलसिलेवार प्रस्तुत है –

1. प्रथम दिवस– काठमाण्डू में आपके ग्रुप का परिचय। साथ ही ग्रुप लीडर के अनुसार अपनी यात्रा पूर्ण करना।

2. द्वितीय दिवस– पशुपतिनाथ, भगवान विष्णु के दर्शन। साथ ही नेपाल के प्राकृतिक सौन्दर्य के दर्शन।

3. तृतीय दिवस– कैलाश मानसरोवर की यात्रा प्रारंभ होती है। पहला पड़ाव कोदारी बार्डर जहां आपके पासपोर्ट की चेकिंग चाईना के द्वारा होती है।

4. चतुर्थ दिवस– हम निलयम पहुंच जाते हैं। यहीं ग्रुप लीडर आपको ट्रेकिंग के लिये ले जाता है।

5. पंचम दिवस– साँगा रात्रि विश्राम। प्रातः यात्रा प्रारंभ होती है।

6. षष्ठम दिवस– हम प्रयाग पहुंच जाते हैं। रात्रि विश्राम। पुनः प्रातःकाल यात्रा प्रारंभ होती है।

7. सप्तम दिवस– मानसरोवर झील के दर्शन, पूजा अर्चन एवं स्नान।

8. अष्टम दिवस– यात्रा का आखरी पड़ाव दारचीन। यहीं से यमद्वार कैलाश पर्वत की परिक्रम शुरू होती है।

9. नवम, दशम, एकादश के दिन कैलाश परिक्रमा पूर्ण हो जाती है।

पुनः लौटने का सिलसिला प्रारंभ होता है। यात्रा में अपने स्वास्थ्य का पूरा ख्याल रखें। "डायोमेक्स" टेबलेट आपकी यात्रा में परम आवश्यक है। भरपूर मात्रा में कपूर ले जाना न भूलें, जिसे सूंघने से आक्सीजन की कमी महसूस नहीं होती। हमारी यात्रा सुखद रही। सगुण, निर्गुण दोनों स्वरूप के दर्शन हमने आशुतोष भंडारी से पाये। ईश्वर के दोनों स्वरूप अकथनीय है।

'kkd&lan'k

मानस भवन परिसर के संस्थापक सदस्यों में *श्री रमेश किशोर अग्निहोत्री* आईपीएस (भूतपूर्व डायरेक्टर जनरल पुलिस) का *दिनांक 21 मार्च, 2019* को भोपाल में स्वर्गवास हो गया। वे अनुशासन के प्रति हमेशा सजग रहते थे।

अनेक महत्वपूर्ण स्थानों तथा पदों पर उनकी पदस्थापना हुई। चाहे असम हो अथवा ओडीसा हो वे हर समय अपने समाज से जुड़े रहे तथा छोटे–बड़े का ध्यान रखे बगैर वे हमेशा ही सबकी मदद करने को तत्पर रहते थे।

उनके स्वर्गवास से उनके परिवार तथा समाज को जो क्षति हुई वह अपूरणीय रहेगी। मानस भवन परिवार की शोकपूर्ण श्रद्धांजलि।

izlaxo'k

thou d ekgd jx

¼gkyh½

i- uohu vkpk;

भारत त्यौहारों का देश है। हर माह यहाँ कोई न कोई त्यौहार मनाया जाता है। लेकिन माघ एवं फाल्गुन ये दो माह मदनोत्सव से जुड़े हैं। मदन का दूसरा नाम है–प्रणय, प्रेम और शृंगार। इसलिए यह मौसम ही प्रणय और प्रेम का मौसम बन गया जिसमें नृत्य, गायन, मस्ती एवं शृंगार की छटा प्रकृति से लेकर इंसान के चेहरों पर बिखरी होती है। ये सभी प्रेम का संदेश बांटते हैं। यह मौसम है जिसमें प्रकृति भी नई साज–सज्जा व शृंगार से संवरती, होली में मस्ती व खुशी से झूमती नज़र आती है। भविष्य पुराण के अनुसार नारद जी ने महाराज युधिष्ठिर से कहा – राजन्! फाल्गुनी पूर्णिमा के दिन सब लोगों को अभयदान देना चाहिए जिससे सारी प्रजा उल्लासपूर्वक हंस सके।

ज़िंदगी जब सारी खुशियाँ स्वयं में समेटकर प्रकृति से प्रस्तुति का बहाना मांगती है तब प्रकृति मनुष्य को होली जैसा त्यौहार देती है। असल में होली बुराइयों के विरुद्ध उठा एक प्रयत्न है जिसमें जिंदगी जीने का नया अंदाज मिलता है। कभी होली में रंगों की फुहार से जहाँ मन की गांठें खुलती थीं, दूरियाँ सिमटती थीं, वहां आज होली के हुडदंग और गंदे तथा हानिकारक पदार्थों के प्रयोग से डरे सहमें लोगों के मन में होली का वास्तविक अर्थ गुम हो रहा है। परंतु अधिकांश लोगों का मन तो उल्लास पर्व होली के इस रंगीले त्यौहार में डूबने और खो जाने को करता है।

यह पर्व हिन्दू पंचांग के अनुसार फाल्गुन मास की पूर्णिमा को हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया जाता है। फाल्गुन मास में मनाया जाने के कारण इसे फाल्गुनी भी कहते हैं। प्रथम दिन होलिका जलाई जाती है। दूसरे दिल धुलेंडी या धूलिवंदन पर लोग एक दूसरे पर रंग अबीर गुलाल इत्यादि लगाते हैं। ढोल बजाकर होली के गीत गाते हैं। ऐसा माना जाता है कि होली के दिन लोग पुरानी कटुता को भूलकर गले मिलते हैं। सारे गिले शिकवे भूल स्नेह संबंध स्थापित करते हैं।

वेदों तथा पुराणों के पर्यालोचन से होलिका शब्द का अर्थ अग्नि की रक्षिका शक्ति होता है। उसी का निर्वचन करते हुए पुराण पुरुष कहता है –

सर्वदुष्टापहो होमः सर्वरोगोप शान्तये।

क्रियते स्थां द्विजैः पार्थतेन सा होलिका स्मृता।।

होली को लेकर देश के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न मान्यताएं हैं और शायद

यही विविधता में एकता, भारतीय संस्कृति की परिचायक भी है। उत्तर पूर्व भारत में होलिका दहन को भगवान कृष्ण द्वारा राक्षसी पूतना के वध से जोड़कर 'पूतना दहन' के रूप में मानाया जाता है। तो दक्षिण भारत में मान्यता है कि इस दिन भगवान शिव ने तीसरा नेत्र खोलकर कामदेव को भस्म कर दिया था और उसकी राख को अपने शरीर पर मल कर नृत्य किया था। शिव द्वारा कामदेव का दहन एवं चंदन की आहुति, कामदेव को आग से हुई जलन को शांत करने की प्रतीक है। इसी प्रकार हिरण्यकश्यपु एवं बहन होलिका की कथा प्रचलित है। बहन होलिका प्रह्लाद को गोद में लेकर अग्नि में बैठी, प्रह्लाद बच गया एवं होलिका जल गई। तब से होलिका के जलने की तपन से बचने के लिए एक दूसरे पर जल डालने का त्यौहार मनाया जाता है।

दरअसल होली के लिए उत्सवनुमा माहौल भी चाहिए और मन भी, एक ऐसा मन जहां हम सब एक हों और मन की गंदी परतों को उखाड़ फेंके। अविभक्त मन के आयने में प्रतिबिम्बित सभी चेहरे हमें अपने लगने लगें। होली हमारा सांस्कृतिक पर्व है। बेहतर हो कि हम होली के वास्तविक अर्थ को समझें।

ए 403, तिरुपति हाइट्स, नानाखेड़ा, उज्जैन

ikBd fy[krs gSa

"मानस भारती" का "सुंदरकांड" विशेषांक पाकर अत्यंत प्रसन्नता हुई। रामकथा का यह कांड आकार में भले ही छोटा हो किन्तु उसकी महत्ता निर्विवाद है। अध्यात्मिक और भक्ति साधना के लिए नहीं अपितु जीवन को आलोक प्रदान करने के लिए इसी कांड से राम को लक्ष्य की प्राप्ति और पूर्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। राम का मूल लक्ष्य था "निश्चर हीन करौं मही..."। निशाचरों का केन्द्र लंका नगरी थी और उसका अधिपति था राक्षसराज रावण। रावण और लंका के विनाश के बिना लक्ष्यपूर्ति संभव न थी। कारण बना सूपर्णखा के नाक कान काटना और सीता का अपहरण।

विभिन्न सूत्रों से राम को यह जानकारी तो मिल गई कि सीता का हरण लंकाधिपति रावण ने किया है। अतः वहां तक पहुंच और सीता का पता लगाना प्राथमिक कार्य था। यह कार्य हनुमान ने अपनी सूझबूझ और पौरुष से संपन्न किया। समुद्र को लांघना, लंका नगरी में पीठों की तलाश करना, विभीषण से संपर्क कर राम की ओर प्रेरित करना, संवाद करके रावण के मन में भय उत्पन्न कर लंका जलाकर सुरक्षित राम को सारी सूचनाएं देना आदि कार्य हनुमान द्वारा सम्पन्न हुए। इसी के बाद रावण से युद्ध कर रावण और निशाचरों का विनाश कर राम अपना संकल्प पूरा करने में सफल हुए।

सुंदरकांड के माध्यम से सारी रामकथा का आलोड़न–विलोड़न हो जाता है। यदि हनुमान जी का एक नाम "सुंदर" हैं तो "सुंदरकांड" नाम अधिक सटीक लगता है। स्व. राजेश्वरानंदजी का मानस भवन से पुराना और प्रगाढ़ संबंध रहा है। वे अपनी सरल वाणी, गहरी सूझबूझ से श्रोताओं को आकर्षित और प्रभावित करते थे। उनको विशेषांक समर्पित कर आपने स्तुत्य कार्य किया है।

अंक सर्वथा पठनीय और संग्रहणीय है।

गंगाप्रसाद बरसैंया,

ए–7, फारचून पार्क, जी–3, गुलमोहर, भोपाल–462039

leh{kk

or eku O;kf/k dk jkedFkk e mi pkj

iHkn ;ky feJk

कृति	:	आतंकनिर्मूलनं रामराज्ये
कृतिकार	:	प्रो. बालकृष्ण कुमावत
प्रकाशक	:	तुलसी मानस संस्थान, जयपुर, राजस्थान
मूल्य	:	रुपए 400/–

रामकथा के संश्लेषक और परम आस्थावान विचारक श्री बालकृष्ण कुमावत का यह कथा–प्रकल्प "आतंकनिर्मूलनं रामराज्ये" एक समकालीन वैश्विक महामारी के निदान की चेष्टा है। गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है कि जब विराट ब्रह्मांड के उर प्रदेश में रावण रूपी राजयक्ष्मा हो गया तथा बड़े–बड़े हकीम और रसायनज्ञ उसके निदान में असफल हो गए तो महा रसायन–शास्त्री हनुमान ने लंका जलाकर उसके स्वर्ण को पवन वेग में तपाते हुए समुद्र के जल में बार–बार डुबोकर एक ऐसी स्वर्ण भस्म तैयार की जिसने इस संसार को महा व्याधि से मुक्ति प्रदान कर राम राज्य की स्थापना में सहायता प्रदान की। श्री कुमावत ने मानस की निम्न पंक्तियों के उद्धरण में इसी महाव्याधि को एक बार पुनः अवतरित होते इस प्रकार देखा है–

वरनि न जाय अनीति अधम निशाचर जे करहिं
हिंसा पर अति प्रीति, तिनके पापन कवन मिति।

देश के प्रख्यात मानस मर्मज्ञों द्वारा आशंसित इस कृति में लेखक ने मानस से अवांतर संस्कृत के अन्य प्रामाणिक ग्रन्थों का भी आश्रय लेते हुये श्रीराम की कथा के आरंभ से लेकर रामराज्य तक की स्थापना का परिदृश्य उपस्थित कर जैसे मानव जाति तक यह शाश्वत संदेश पहुंचाया है कि हम इसे भगवान के अवतार की भूमिका मानकर एक बार पुनः आश्वस्त हो सकते हैं।

इस कृति का समादर सभी रामकथा प्रेमियों को करना चाहिये।

35, ईडन गार्डन, चूनाभट्टी, कोलार रोड, भोपाल–16

izfr"Bku lekpkj

vrjk"Vªh; efgyk fnol 2019

शुक्रवार 8 मार्च 2019 को मानस भवन में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस का संयुक्त आयोजन तुलसी मानस प्रतिष्ठान की महिला इकाई महिला मानस मंच तथा भोपाल कैंसर रिसर्च एवं वेलफेयर एसोसिएशन द्वारा किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् डॉ. श्रीमती ज्ञानवती अवस्थी ने की तथा विशेष अतिथि थीं श्रीमती जयश्री कियावत, आयुक्त लोक शिक्षण संचानलायय एवं डॉ. समीक्षा दुबे कैंसर विशेषज्ञ ।

कार्यक्रम के प्रथम भाग में अध्यक्ष श्रीमती ज्ञानवती अवस्थी को ''श्रीमती शारदादेवी दुबे स्मृति सेवा सम्मान'' से सम्मानित किया गया । अपने सारगर्भित उद्‌बोधन में श्रीमती अवस्थी ने शास्त्रों में सामान्य व्यवहार में भी प्रारंभ से ही महिलाओं की जो सम्मानीय स्थिति है उस पर प्रकाश डालते हुए कहा कि आज विभिन्न क्षेत्रों में महिलाएं बहुत ऊँचे ओहदे पर हैं। पूरी लगन और सक्षमता से अपनी जिम्मेदारी निभा रही हैं । अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस की योजना तथा संयुक्त राष्ट्र द्वारा उसकी अत्यंत महत्वपूर्ण जानकारी प्रो. श्रीमती कृष्णा श्रीवास्तव ने प्रस्तुत की। कृष्णा जी ने भी विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा किये गये उत्तम कार्यों को बताते हुए यह विश्वास प्रकट किया कि आगे भी महिलाएं नित्य प्रगति करती रहेंगी । श्रीमती जयश्री कियावत ने अपने उद्‌बोधन में विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा की जा रही भागीदारी की सराहना करते हुए यही आशा व्यक्त की कि बहुत शीघ्र ही सभी क्षेत्रों में महिलाएं और अधिक प्रतिशत में हिस्सा ले सकेंगी ।

आयोजन के दूसरे भाग में कैंसर रोग पर विस्तृत जानकारी देते हुए यह सलाह दी कि हमें किसी भी कष्ट को सहन नहीं करना चाहिए। तत्काल उसके बारे में जांच पड़ताल करवाकर निदान करना चाहिए । अब कैंसर का इलाज सर्वसाध्य हो गया है तथा दवाएं भी सस्ती हो गई हैं। भोपाल कैंसर रिसर्च एवं वेलफेयर एसोसिएशन के अध्यक्ष श्री मनोज चतुर्वेदी ने ऐसी अनेक महिलाओं के उदाहरण प्रस्तुत किये जिन्होंने प्रारंभिक स्टेज पर ही कैंसर का इलाज किया और अब वे सामान्य जीवन यापन कर रही हैं । प्रो. प्रीति मिश्रा और श्रीमती सीमा चतुर्वेदी ने अपने अनुभव बताते हुए इन बातों की पुष्टि की । भोपाल कैंसर रिसर्च एवं वेलफेयर एसोसिएशन ने विभिन्न क्षेत्रों में उत्तम कार्य करने वाली 9 सफल महिलाओं का भी सम्मान किया । कार्यक्रम का सफल संचालन श्रीमती जानकी शुक्ला ने किया तथा श्री कमलेश जैमिनी द्वारा धन्यवाद के पश्चात् कार्यक्रम समाप्त हुआ ।

दिनांक 9 और 10 मार्च को डॉ. (श्रीमती) ज्ञानवती अवस्थी के प्रवचन आयोजित किये गये। डॉ. अवस्थी ने जगतजननी सीताजी के संबंध में रामकथा में उनके आलौकिक योगदान तथा उनका आदर्श जीवन हमें क्या शिक्षा देता हैं, पर प्रवचन किये।

इस तरह यह तीन दिवसीय अंतराष्ट्रीय महिला दिवस समारोह सफलतापूर्वक संपन्न हुआ।

Jkhe rh Hkkj rh f t oukuh
मानस भवन, भोपाल

gkyh feyu lekjkg&2019

इस वर्ष होली मिलन समारोह मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल में शनिवार दिनांक 23 मार्च 2019 को संध्या 7.00 बजे आयोजित किया गया। जिसमें लगभग 150 श्रोताओं ने हर्षोल्लास के साथ कार्यक्रम का आनंद लिया। कार्यक्रम की प्रस्तुति जिन महानुभावों ने पेश की वे निम्न हैं–

1.	सरस्वती वंदना	–	श्रीमती रजनी वर्मा, श्रीमती रेखा वर्मा (अम्बिका ग्रुप)
2.	श्रीमती सुनीता शर्मा	–	राधारानी गुप
3.	श्रीमती कृष्णा श्रीवास्तव	–	आलेख
4.	श्रीमती जानकी शुक्ला	–	आलेख– होली का महत्व
5.	श्रीमती सुशीला शुक्ला	–	आलेख
6.	श्रीमती आरती सिंह चौहान	–	व्यंग्य – कविता
7.	श्रीमती उमा नामदेव	–	होली गीत
8.	श्रीमती लता बाथम (झरनेश्वर गुप्र)	–	बुंदेली होली गीत
9.	कवि श्री मनोहर पटेरिया 'मधुर'	–	वीर रस की कविता
10.	श्री चन्द्रप्रकाश जायसवाल एवं श्री एन.एल.खंडेलवाल द्वारा	–	व्यंग्य आलेख
11.	श्रीमती मालती जोशी	–	कविता
12.	श्री आई.डी.खत्री	–	व्यंग्य आलेख

कार्यक्रम में सभी प्रस्तुतियों का श्रोताओं ने भरपूर आनंद लिया एवं प्रीतिभोज के बाद कार्यक्रम का समापन हुआ। भोजन में विशेष तौर से मौसमी व्यंजन गुजिया और पापडी का समावेश था।